BA VTH SEMESTER **Course No: MU-501 Indian Music**

SECTION A **LESSON 1**

Tittle- अल्हैया बिलावल

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 राग अल्हैया बिलावल

1.3.1 परिचय

1.3.2 आलाप

1.3.3 मसीतखानी गत और तोडे

1.3.4 रजाखानी गत और तोडे

1.3.5 झाला

1.4 बिलंबित एकताल बंदिश

1.5 मध्यलय बंदिश

1.6 सारांश

1.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1.8 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1 प्रस्तावना

गायन वादन तथा नृत्य इन तीनों के समावेश से संगीत की परिभाषा दी जाती है। संगीत में गायन का अनुसरण सदैव वाद्यों द्वारा किया जाता है। उसी प्रकार गायन एवं वादय दोनों के रागों में भी समानता पाई जाती है। आगे के अध्याय में हम अपने विषय से सम्बधित रागों का विस्तार से अध्ययन करेंगें। जिसमें रागों का परिचय, ख्याल की दो बंदिशें, बिलंबित एवं

मध्यलय, सितार की गतें, मसीतखानी गत, रजाखानी गत तोडों सहित और अन्त में झाला दिया गया है। उसके उपरान्त ख्याल गायन की बंदिशें दी गई है।

1.2 उद्वेश्य

संगीत में भावों को वयक्त करने के लिय प्रत्येक विधा की अपनी शैली है। जिसमें गायन की अपनी एक अलग शैली हैं उसी प्रकार वाद्यों का भी अपना एक अस्तित्व है। उसी प्रकार से वाद्य पर गायकी अगं का वादन तो किया ही जाता है परन्तु वाद्यों पर तन्त्रकारी अगं का भी वादन किया जाता है। आगे के अध्याय में सितार वाद्य से सम्बघित सामग्री दी गई है और जिससे सितार की शैली को समझा जा सके। वर्तमान में जो भी अंग सितार पर बजाया जाता है वो ध्रुवपद से अत्यधिक प्रभावित है क्योकि सितार में जोड झाला पूर्ण रूप ध्रुवपद का ही अगं है।

1.3 राग बिलावल

1.3.1 परिचय आरोह– सा रे, ग रे ग प, ध, नि ध नि सां।

अवरोह– सां नि ध प ध नि ध पं, म ग, म रे सा।

पकड़ – ग रे, ग प, ध, नि ध नि सां।

थाट– बिलावल

वादी– धैवत

सम्वादी– गान्धार

जाति– षाडव–सम्पूर्ण

समय– दिन का प्रथम प्रहर

स्वर– अवरोह में दोनों निषाद।

वर्जित स्वर– आरोह में मध्यम।

1.3.2 स्वर विस्तार

1. सा, ग रे ऽ ग प, प ऽ म ग म रे, सा रे ग प ऽ म ग म रे, सा।

2. सा नि़ ध़ प़, नि़ ध़ ऽ सा, ग रे सा, प ऽ म ग म रे, सा।

3. सा ग रे ग प प, ध प म ग म रे ग प, ग प ध नि ध प, ध प म ग म रे, ग प ऽ म ग म रे, सा।

4. ग प ध नि सांऽऽऽ सां गं रें सां, सां गं रें गं पंऽ मं गं मं रें सां, गं मं रें सां, रें सां, ध नि ध प,ग प ध नि सांऽ ध नि ध प म ग म रे, ग प ध प म ग म रें, ग प ध नि ध प, ध प म ग म रे, सा।

1.3.3 बिलावल विलम्बित गत

स्थायीतीनताल

		गग	पप्र निनि – निनि
		दिर	दिर दिर दा दिर
सां सां सां निस्रां	सां सां धप म	मग्र मरे सा	
दा रा दा दिर	दा रा दिर दा	दिर दिर दा	
		गरे	ग पप धनि सांनि
		दिर	दा दिर दिर दिर
सां सांसां सां सां	सारें सांनि धनि धप	मग मरे सा	
दा दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दिर दिर दा	
0	3	**X**	2

अन्तरा

		पप	पप्र नि नि नि
		दिर	दिर दा रा दा
सां सां रें सां	सां रेंरें गं रें	गं रें सां	
दा रा दा रा	दा दिर दा रा	दा दा रा	
		सांसां	गं गंमं रें सांरें
		दिर	दा दिर दा दिर
सां – ध पप	म गग म रे	ग रे सा	
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा	
0	3	**X**	2

तोड़े– मसीतखानी गत सम से मुखडे तक

1. सासागरे गगपप्र मगरेसा गगरेग्र | गगपप मगरेसा नि़सारेसासारेनि़सा | गमरेग पपमग रेसानि़सा

2. मगरेसा नि़सासारे गपधनि धपमग | रेसागरे गपधनि मगरेसा गगपप | धनिधप्र मगरेसा रेसानि़सा

1.3.4 रज़ाखानीगत त्रिताल

स्थाई

ग पुप ध नि	सां– सां नि	ध निनि ध प	म गग म रे
दा दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा	दा दिर दा रा
ग मम प प	म गग म रे	ग मम पप गग	म मरे रे सा
दा दिर दा रा	दा दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दा दिर दा रा
0	3	x	2

अन्तरा

ग पुप ध नि	सां– सां नि	ध निनि ध प	म गग म रे
दा दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा	दा दिर दा रा
ग मम प प	म गग म रे	ग मम पप गग	म मरे रे सा
दा दिर दा रा	दा दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दा दिर दा रा
0	3	x	2

तालबद्द तोड़े

8 मात्रा के तोड़े

1 गप धनि सांनि धप । धनि धप मग रेसा ।

2 गप मग मरें गप । धनि धप मग रेसा ।

3 सारे गरे गप मग । मरे गप धनि सां– ।

4 पप मग मरे गप । धपि धप धनि सां ।

5 सारे गप मग रेसा । सांनि धप मग रेसा ।

x । 2

खाली से (9 मात्रा से)

1 सारे गप मग मरे । गप धनि धप मग ।

मरे गप धनि सारें ।सांनि धप मग रेसा

2 सारे गरे गप मग ।मरे धनि सांध निसां ।

निसां धनि धप मग । मरे गप मग रेसा ।

3 पप मग मरे गप । मग मरे गप धनि ।

धप मग मरे गप । मग मरे गरे सा–

1.3.5 झाला

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ
ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ
गं ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
प ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
गं ऽ ऽ ऽ	ध ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
गं ऽ ऽ ऽ	गं ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
प ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
सां ऽ ऽ ऽ	सा ˙ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सा ˙ऽ ऽ ऽ
सा ˙ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ

तिहाई (गंगं रेंरें सांनिं धप पम मग मरे सासा) –3

सम से आरम्भ

गप धनि सां– गप धनि सां– गप धनि

गप धनि सां– गप धनि सां– गप धनि

गप धनि सां– गप धनि सां– गप धनि सां–

1.4 अल्हैया बिलावल– एकताल (बिलंबित)

स्थायी

					म
					कं
नि धप	म पम	ग रे	सा निसा	सा –रे	गरे सा
ऽ थाऽ	ऽ ऽऽ	मो ऽ	रे ऽऽ	ये ऽऽ	ऽजि न
सासानिध सा,निरे	मगमरे ग	म ग	ग प	प प	ध गम
जाऽऽऽ ऽ,ऽऽ	ऽऽऽऽ ऽ	वो ऽ	रे ऽ	आ रे	ऽ, ऽक
3	4	**x**	0	2	0

अन्तरा

प[म] –	नि[सां] निनि	सां –	सां –	सांसां रें	गं मं
ना ऽ	को ऽऊ	ऐ ऽ	सी ऽ	मोरि भा	ऽ ऽ
मं गं	मंरें सां	प[म] धसां	सां[रें] ध,निप	प प	ध गम
ऽ ऽ	ऽऽ वे	बे गिले	आ वो,ऽऽ	आ रे	ऽ ऽ,क
3	4	**x**	0	2	0

1.5 राग बिलावल मध्य लय स्थायी

सां सां ध[सां] प	ग[प] म प म	ग – रे[म] –	सा रे सा –
ह रि सों ऽ	च ऽ क्र ध	रा ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऊँ ऽ
0	3		2
ग[प] – ग मरे	ग[प] प नि नि	सा – सांसां गंरें	सांरें सांनि धप मग
भी ऽ ष मऽ	ना ऽ म क	हा ऽ ऽऽ ऽऽ	ऽऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ
0	3	**x**	2

अन्तरा

प – प प	ध[सां] नि नि सां	सां – सां सां	रें – सां –
पां ऽ ड व	से ऽ न स	मे ऽ त सा	ऽ र थी ऽ
सां[नि] – रें गं	गं रें सां सां	ध[सां] – सां सां	ध[सां] नि प –
शो ऽ भि त	पू ऽ र ब	हा ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ ऊँ ऽ

प प सां सां	ध$^{सां}$ प ग मरे	ग म प मग	रे^{म} – सा –
य ह न क	रूँ ऽ तो ऽऽ	आ ऽ न तेऽ	हा ऽ री ऽ
सां – गं –	मं रें ध नि	सां – सांरें सांनि	धप मग म ग
का ऽ पी ऽ	ध्व ज तें उ	ता ऽ ऽऽ ऽ ऽ	ऽऽ ऽऽ ऽ रूँ
0	3	**x**	2

1.6 सारांश

उपर दी गई सामग्री से हमें यह ज्ञात होता है कि सितार की वादन शैली कया है और किस प्रकार से वादन किया जाता है जिसमें प्रथम चरण में राग का आरम्भ करते हुए आलाप, जोड झाला , मसीतखानी गत, रजाखानी गत उसके उपरान्त तोड़े तथा अन्त में झाला का वादन किया जाये। उसके उपरान्त गायन की दो बंदिशें दी गई है। एक विलंबित ख्याल तथा मध्यलय की बंदिश दी गई। यह सम्पूर्ण सामग्री संगीत ही परीक्षा हेतू अत्यंत लाभकारी है।

1.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 राग बिलावल का वादी स्वर कौन सा है

1 ध   2 नि   3 प   4 सां   ऊ 1

2 राग बिलावल का समप्रकतिक राग कौन सा है।

1 गुजरी तोड़ी   2 विलासखानी तोड़ी   3 भैरव   4 अल्हैया बिलावल   ऊ 4

3 राग अल्हैया बिलावल का पकड़ कया है।

1 ऩि रे ग   2 ग रे ग प   3 प म गमग ग   4 म रे ग   ऊ 2

4 राग अल्हैया बिलावल की जाति कया है।

1 सम्पूर्ण   2 षाडव–सम्पूर्ण   3 औडव–औडव   4 सम्पूर्ण–सम्पूर्ण   ऊ 2

5 बिलावल में कौन सा स्वर लगाने से अल्हैया बिलावल राग बनता है।

1 ग   2 म   3 नि   4 प   ऊ 3

6 राग अल्हैया बिलावल में कौन सा स्वर आरोह में प्रयोग नही किया जाता है।

1 रे   2 ग   3 म   4 ध   ऊ 3

7 राग बिलावल से मिलते जुलते राग का नाम लिखो।

1 हमीर 2 यमन 3 अल्हैया बिलावल 4 कामोद ऊ 3

8 राग बिलावल का वह स्वर समूह लिखो, जिससे राग बिलावल को पहचाना जाता हो।

1 रे ग रे सा 2 ग रे ग प 3 नि ध नि सा 4 म रे सा ऊ 2

1.8 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न :–

1 राग अल्हैया बिलावल की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

2 राग अल्हैया बिलावल का समप्रकृतिक राग कौन सा है।

3 अल्हैया बिलावल और बिलावल में क्या अन्तर है।

4 अल्हैया बिलावल में किस स्वर को आरोह में नही लिया जाता है।

5 राग बिलावल का प्रारम्भ किस स्वर से किया जाता है।

6 राग अल्हैया बिलावल की प्रकृति कौन सी है।

7 राग बहार की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

8 राग बहार का समप्रकृतिक राग कौन सा है।

9 बहार और मियॉ मल्हार में क्या अन्तर है।

10 राग बिलावल और अल्हैया बिलावल की तुलना कीजिए।

11 राग अल्हैया बिलावल का परिचय लिखिए।

12 राग अल्हैया बिलावल की रजाखानी गत चार तोडों सहित लिखें।

13 मसीतखानी और रजाखानी गत की तुलना कीजिए।

14 अपने पाठयक्रम के किसी एक ताल को लिखिए।

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

सितार प्रबन्ध, डॉ बिरेन्द्र नाथ मिश्र

संगीत सुर और साज, डॉ एस एन मिश्रा

राग परिचय, हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, भाग

BA VTH SEMESTER **Course No: MU-501 Indian Music**

SECTION A **LESSON 2**

Tittle-राग बहार और राग मियाँ म्ल्हार

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्धेश्य

2.3 राग मियाँ मल्हार का परिचय

2.4 आलाप

2.5 राग मियाँ मल्हार की मसीतखानी गत

2.6 राग मियाँ मल्हार की रज़ाखानी गत, तोडे, झाला

2.7 राग मियाँ मल्हार मध्यलय बंदिश, तोडे

2.8 राग बहार का परिचय, आलाप

2.9 राग बहार बिलबित ख्याल, राग बहार मध्यलय तीनताल

2.10 राग बहार की रज़ाखानी गत, तोडे , झाला

2.11 सारांश

2-12 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

2.13 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.1 प्रस्तावना

गायन वादन तथा नृत्य इन तीनों के समावेश से संगीत की परिभाषा दी जाती है। संगीत में गायन का अनुसरण सदैव वाद्यों द्वारा किया जाता है। उसी प्रकार गायन एवं वादय दोनों के रागों में भी समानता पाई जाती है। आगे के अध्याय में हम अपने विषय से सम्बधित रागों का

विस्तार से अध्ययन करेंगें। जिसमें रागों का परिचय, ख्याल की दो बंदिशें, विलंबित एवं मध्यलय, सितार की गतें, मसीतखानी गत, रजाखानी गत तोडों सहित और अन्त में झाला दिया गया है। उसके उपरान्त ख्याल गायन की बंदिशें दी गई है।

2.2 उद्धेश्य

इस अध्याय में मल्हार अंग से गाये जाने वाले रागों का विस्तार से वर्णन किया गया है। जिसमें गायन की अपनी एक अलग शैली हैं उसी प्रकार वाद्यों का भी अपना एक अस्तित्व है। इस अध्याय में गायन एवं सितार वाद्य से सम्बधित सामग्री दी गई है और जिससे गायन एवं सितार की शैली को समझा जा सके।

2.3 राग मियाँ मल्हार का परिचय

ठाठ	काफी
जाति	सम्पूर्ण शाड़व
वादी	म संवादी सा
स्वर	ग कोमल, दोनों नी
वर्जित स्वर	आरोह में ध
गायन समय	मध्य रात्रि
समप्रकृति राग	बहार
आरोह	रे म रे सा, स म रे प, नी ध नी सां
अवरोह	सां नि प, मप ग म रे सा
पकड़	रे म रे सा, नि प़ म़ प़ ऩी ध़ नी सा

राग मियां मल्हार पूर्वांग प्रधान गंभीर प्रकृति का राग है। यद्यपि इसका गायन समय मध्यरात्रि है परंतु वर्शा ऋतु में यह किसी भी समय गाया बजाया जा सकता है। मरे रेप इस राग का विशिष्ट स्वर समूह है। इसमें दोनों निशादों की समीपता कानों को बहुत अच्छी लगती है।

राग मियाँ मल्हार

ग कोमल संवाद म सा, उतरत धैवत वर्ज्य।
दोऊ निशाद का रूप ले, कहि मियाँ मल्हार।।

आरोह :– रे म रे सा, म रे प, नी ध नी सां

अवरोह :–सां नि प, मप ग म रे सा

पकड़ :– रे म रे सा, नि प़ म़ प़ ऩी ध़ नी सा

2.4 आलाप

नी ध नी सां सां – नी प ऩी सा – रे ऩी सा – नी ध़ ऩी सा – रे सा रे ऩी सा नी ध़ ऩी सा – नी – प़ म़ प़ नी ध़ ऩी सा–सा रे ऩी सा नी ध़ नी प़ म़ प़ नी ध़ नी सा – रे प म प ग म रे सा – रे ऩी सा नी सा नी ध़ ऩी सा – सा सा सा – – सा सा सा ऩी ऩी रे रे सा – – – – ।

नी ध नी सां – – – नी प म प – – म रे प – नी ध नी सां – नी ध नी प सा म ग म सा रे ऩी सा म रे प म नी प म प – ऩी सा रे म प ध नी सां – – – –नी ध नी – नी ध नी सां – – म प ध नी सां – नी ध नी प ग म रे सा – – – – सा सा सा ऩी सा सा ऩी ऩी रे रे सा– –।

2.5 राग मियाँ मल्हार मसीतखानी गत तीनताल

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
	स्थायी	सासा	नि पप मपप निध
ऩि ऩि सा सासा	रे मम रे प	गम रे सा दिर	दा दिर दादिर दिर
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दिर दा रा	
	अन्तरा		
		निनि	सा रेरे म रे
प प म निनि	ध निनि सां रें	रें नि सां दिर	दा दिर दा रा
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	छा दा रा	
		सांसां	रें मंमं गं मं
रें सां सां निनि	सं निनि म प	गम रे सा दिर	दा दिर दा रा
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दिर दा रा	
X	2	0	3

2.6 राग मियाँ मल्हार रज़ाखानी गत

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
	स्थायी	ऩि सासा रेरे सासा	नि – म़ प़
नि निध –ध निनि	सा निनि सा सा	दा दिर दिर दिर	दा ऽ दा रा
दा रदा –रा दिर	दा दिर दा रा		
		म रे – रे	प पप म प

		दा दा ऽ रा	दा दिर दा रा
म पप निनि मप	ग मरे –रे सा		
दा दिर दिर दिर	दा रदा ऽरा दा		
	अन्तरा	म रेरे प प	नि निध –ध नि
सां – सां सां	नि धध नि सां	दा दिर दा रा	दा रदा –र दा
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा		
		गं मंमं –मं मंमं	प पप म प
नि पप मम पप	ग मरे –रे सा	दा रदा ऽरा दिर	दा दिर दा रा
दा दिर दिर दिर	दा रदा ऽरा दा		
	2	0	3

राग मियाँ मल्हार के रजाखानी गत के तोडे

1 ऩिसा रेसा ऩिध़ ऩिसा मप़ ऩिध़ ऩिसा रेसा। **9वी मात्रा से**

2 ऩिसा रेसा गम रेसा मरे पप मप निध निप निनि पप गम रेरे मप गम रेसा। **9वी मात्रा से**

3 रेरे सारे रेसा ऩिसा गग मरे पप मप निध निनि सारें निसां गंमर रेसा निसां रेंसां निनि पप गम रेसा रेरे सारे ऩिध निसा

झाला

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
ऩिऽ ध़ऽ ऩिऽ साऽ	नि ऽऽ धऽ ऽऽ	ऩिऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	रेऽ ऽऽ निऽ ऽऽ
साऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	धऽ ऽऽ निऽ ऽऽ	रेऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	रेऽ ऽऽ निऽ ऽऽ
साऽ ऽऽ निऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ निऽ ऽऽ	धऽ ऽऽ निऽ ऽऽ
साऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	मऽ ऽऽ रेऽ ऽऽ	साऽ ऽऽ साऽ ऽऽ
मऽ ऽऽ रेऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ साऽ ऽऽ
निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ पऽ ऽऽ	मऽ पऽ धऽ निऽ	निऽ ऽऽ पऽ ऽऽ
गऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	रेऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	मप निनि पम रेसा	निसां निसां रेंरें सारें
निसां धनि पम निनि	धनि सांसां सारें रेंरें	रेंसां निसां धनि मप	निनि पम रेसा निसा
रेनि सासा मरे पप	मप गम रेसा निसा	निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ निऽ ऽऽ
सांऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	साऽ ऽऽ निध निनि	सांऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	साऽ ऽऽ गम रेरे
पऽ ऽऽ पऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ निध निनि	सांऽ ऽऽ सांऽ ऽऽ	सांऽ ऽऽ निसां रेंसां
रेऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	सांऽ ऽऽ साऽ ऽऽ
गम रेरे पऽ ऽऽ	निध निनि सांऽ ऽऽ	निप मप मऽ ऽऽ	मग रेरे साऽ ऽऽ
ऩिप़ मप़ ऩिध़ ऩिसा	ऩिऽ ऽऽ निप मप	निध निसा निऽ ऽऽ	निप मप निध निसा

तिहाई निध निनि सां निध निनि सां निध निनि
निध निनि सां निध निनि सां निध निनि
निध निनि सां निध निनि सां निध निनि सां

2.7 राग मियाँ मल्हार मध्यलय तीनताल

बोल

स्थायी :—गरजत बरसत आये बदरा, पिया के बिन मोरा तरसे जियरवा।

अन्तरा :—बिजुरी चमके मेहा बरसे, रोकत पिया को देखो रे बदरा।।

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
	स्थायी	रे म रे सा	नि. सा रे सा
नि ऽ ऽ ध़	नि़ नि़ सा सा	ग र ज त	ब र स त
आ ऽ ऽ ये	ब द रा ऽ		
		रे रे म म	प म नि प
		पि या के बि	ना ऽ मो रा
ग म रे सा	नि. सा रे सा		
त र से जि	य र वा ऽ		
	अन्तरा	म म प प	नि ध नि नि
सां ऽ सां सां	नि़ नि़ सां सां	बि जु री ऽ	च म के ऽ
मे ऽ हा ऽ	ब र से ऽ		
		नि सां रें मं	रें सां नि सां
नि प म प	ग म रे सा	रो ऽ क त	पि या को ऽ
दे ऽ खो रे	ब द रा ऽ		
X	2	0	3

ताने

1 सम से

सारे मप निध निप रेम पग मरे सा—

2 सम से

निसा रेम रेसा निसा रेम पग मरे सा—

3 सम से

सारे मप धनि सांसां निनि पम गम रेसा

4 खाली से

निनि पम गम रेसा निंसां रेंसां निनि पम गम रेसा गमं रेंसां निनि पम गम रेसा मरे पप निध

निसां निनि पम गम रेसा

2.8 परिचय– राग बहार

ठाठ	काफी
जाति	षाडव षाड़व
वादी	म संवादी सां
स्वर	ग कोमल, दोनों नी
वर्जित स्वर	आरोह में रे और अवरोह में ध
गायन समय	मध्य रात्रि
समप्रकृति राग	मियाँ मल्हार
आरोह	ऩि सा, ग म, प ग मनी ध नी सां
अवरोह	सां नि प, मप ग म रे सा
पकड़	म प ग म, नि ध नी सा।

राग बहार चंचल प्रधान गंभीर प्रकृति का राग है। यद्यपि इसका गायन समय मध्यरात्रि है परंतु वर्शा ऋतु में यह किसी भी समय गाया बजाया जा सकता है। म पग इस राग का विषिश्ट स्वर समूह है। इसमें दोनों निशादों की समीपता कानों को बहुत अच्छी लगती है।

राग बहार

आलाप

1 सा म, म पग म,नि प म प ग म,ध ऽ नि सां,**नि** प म प ग म, म प ग म रे सा।

2 म ऽम प ग म ध, नि प नि प म प ग ऽ म, ग म ध ऽ नि प नि नि पम प ग म, सा म, म प ग म रे सा।

3 म प ग ऽ म ध नि पम पग म ध,ग म ध निसां निसां नि प ग ग म, ध नि सां, रें सां नि पग म, रे सा।

4 ग म रे सा, नि प म प ग म रे सा, नि ध नि सांऽ नि प, म प ग म रे सा,रें सां नि ध नि सा,नि प म प, ग म रे सा।

5 ग म, नि ध नि सां, रें सां, गं मं रें सां,रें नि सां,नि ध नि सां, सा म, म प ग म, नि ध नि सां, रें सां, ध नि सां रें नि सां नि प, म प ग म रे सा।

2.9 राग बहार बिलबित ख्याल एकताल

बोल स्थायी

आई री नवेली रंगीली रूत बगियन छाई है बहार

अन्तरा

रसवस डोले भंवर बावरा राम रंग कलियन दौरे डार डार

1 2	3 4	5 6	7 8	9 10	11 12
		स्थायी			निप गम
					आई रिन
नि ध	मधनिसां निसां	नि पप	ग –म	म निसां	
वे ऽ	ऽऽऽऽ ऽऽ	ली ऽरं	गी ली	रू ऽ ऽ	
					निप गम
					बगि ऽय
नि सा	म प	ग –म	नि ध,मध	निसांनिसां रेंसां	
न ऽ	छा ऽई	हैं ऽब	हा ऽऽऽ	ऽऽऽऽ ऽर	

					गम धनि
					रस वस
सां सां	निसं निसांरेंसां	निसां निध	निप गम	गम रेसा	
डो ले	भव रऽबा	ऽव राऽ	राम रंग	कलि यन	
					गमं रेंसां
					कलि यन
रें सां	निध धनिसां–	निसांरें–सांरेंरें–	सांनिसां निध	मधनिसां धनिसां	
ऽ रे	डाऽ ऽऽऽऽ	ऽऽऽऽ ऽऽऽऽ	ऽऽरऽ डाऽ	रऽऽऽ ऽऽऽऽ	
x	0	2	0	3	4

ताने 5 वी मात्रा से

1 नि.सा मम रेसा नि.सा गम पग मरे सासा नि.सा गम निध निप गम पग रेसा निसा
नि.सा गम धनि सासा निनि पप गम रेसा मनि धनि सारे निसां निपगम
x

2 सम से
नि.सा गम पम गम निध निप मप गम धनि सांसां निनि पम गम धनि सारें रेंसा

x 0

निनि पम गम धनि सांमं मरें सांनि पम गम पग मरे सा नि.सा गम धनि सारें

2 0

सांनि पम गम रेसा नि.सा गम धनि सांसां

3

बोल स्थायी

देख री सखी कैसी बहार आई बसंत फूल वन में

अन्तरा

झूमझूम कर कलिया आई चम्पा चमेली गुलाब बोलारी
कोयल कुहु कुहु तान सुनावत, गुँजत भँवरा दीन मन के

राग बहार मध्यलय तीनताल

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
	स्थायी	सां	नि सां नि सां
		दे	ख री ऽ सा
नि ध नि प	म प ग म	म नि ध नि	
खी ऽ री ऽ	कै ऽ सी ऽ	ब हा ऽ र	सां नि सां –
			आ ऽ ई ऽ
ध नि सां रें	सां रें नि सां	धनि सांनि सां	
ब सं ऽ त	फू ल व न	मेंऽ ऽऽ ऽ	
	अन्तरा		
		ग – म नि	– ध नि नि
नि नि सा –	सां – सा –	झू ऽ म झू	ऽ म क र
क लि याँ ऽ	आ ऽ ई	नि – सां सां	रें – सां सां
नि – सां सां	नि सा नि ध	च ऽ म्पा च	मे ऽ ली गु
		गं – गं म	रें रें सां सां
नि – सां सां	नि सां नि ध	को ऽ य ल	कु हु कु हु
ता ऽ न सु	ना ऽ व त		
		नि – प प	म प ग म
म नि ध नि	सां – धनि सारें	गुँ ऽ ज त	भुँ व रा ऽ
दी न म न	के ऽ ऽऽ ऽऽ		
x	2	0	3

ताने सम से 11वी मात्रा तक

1 ऩिसा गम धनि सांसां निनि पम गम रेसा गम धनि सां–

2 धनि सारें निसां निध निप मप गम धनि सारें निनि सांसां

3 गम रेसा निसा गम पम गम निध निसां धनि सारें निसां

4 धनि सांनि पम गम   निनि पम पप मग   मम रेसा निनि पम

X   2   0

पप मग मम रेसा   निसा निध निप मप   गम निध निसां धनि   सांध निसां धनि सां

3   X   2   0   दे

2.10 राग बहार रज़ाखानी गत   मध्यलय तीनताल

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
	स्थायी	सा सासा निनि पप	प पग –ग म
नि ध – नि	सां रें नि सां	दा दिर दिर दिर	दा रदा ऽर दा
दा दा – रा	दा रा दा रा		
	अन्तरा	ग मम निनि धध	नि निसां –सां सां
		दा दिर दिर दिर	दा रदा ऽर दा
गं मंमं रेंरें सांसां	नि निरें –रे सा		
दा दिर दिर दिर	दा दिर ऽरा दा		
		नि सांसां रेंरें सांसां	नि निनि –नि प
म पप गग मम	ग गरे रे सा	दा दिर दिर दिर	दा रदा –र दा
दा दिर दिर दिर	दा रदा ऽर दा		
X	2	0	3

राग बहार रज़ाखानी गत के तोडे   सम से

1 मप निध निसां रेंसां निध निप गम रेसा।

2 पप मप निध निप निप मप गम रेसा।

3 निध निसां रेंसां निसां निप मप गम रेसा।

झालाः– राग बहार

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
नि़ऽ ध़ऽ नि़ऽ साऽ	नि ऽऽ धऽ ऽऽ	नि़ऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	रेऽ ऽऽ निऽ ऽऽ
साऽ ऽऽ पऽ ऽऽ	साऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	निऽ साऽ गाऽ मऽ	निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ
निऽ ऽऽ पऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ गऽ मऽ	सांऽ ऽऽ निऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ पऽ ऽऽ
मऽ धऽ पऽ साऽ	गऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	रेऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ साऽ ऽऽ

साऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	मऽ पऽ गऽ मऽ	रेऽ ऽऽ साऽ ऽऽ
नि॒ऽ साऽ मऽ ऽऽ	म॒ऽ पऽ गऽ ऽऽ	गऽ मऽ निऽ धऽ	निऽ ऽऽ सांऽ ऽऽ
सां॒ऽ ऽऽ सांऽ ऽऽ	सांऽ ऽऽ सांऽ ऽऽ	सां ऽऽ ऽऽ ऽऽ	सांऽ ऽऽ ऽऽ ऽऽ
निसां धनि पम निनि	धनि सांसां सारें रेंरें	रेंसां निसां धनि मप	निनि पम रेसा निसा
रेनि सासा मरे पप	मप ग॒म रेसा निसा	निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ निऽ ऽऽ
साऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	साऽ ऽऽ निध निनि	सांऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	साऽ ऽऽ ग॒म रेरे
पऽ ऽऽ पऽ ऽऽ	पऽ ऽऽ नि॒ध निनि	सांऽ ऽऽ सांऽ ऽऽ	सांऽ ऽऽ निसां रेंसां
रेऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ धऽ ऽऽ	निऽ ऽऽ साऽ ऽऽ	सांऽ ऽऽ साऽ ऽऽ
ग॒म मम धध निनि	गम मम धध निनि	साऽ ऽऽ मऽ ऽऽ	गग मम धध निनि

तिहाई नि॒ध निनि सां नि॒ध निनि सां नि॒ध निनि

नि॒ध निनि सां नि॒ध निनि सां नि॒ध निनि

नि॒ध निनि सां नि॒ध निनि सां नि॒ध निनि सां

2.11 सारांश

उपर दी गई सामग्री से हमें यह ज्ञात होता है कि सितार की वादन शैली कया है और किस प्रकार से वादन किया जाता है जिसमें प्रथम चरण में राग का आरम्भ करते हुए आलाप, जोड झाला , मसीतखानी गत, रजाखानी गत उसके उपरान्त तोड़े तथा अन्त में झाला का वादन किया जाये। उसके उपरान्त गायन की दो बंदिशें दी गई है। एक विलंबित ख्याल तथा मध्यलय की बंदिश दी गई। यह सम्पूर्ण सामग्री संगीत ही परीक्षा हेतू अत्यंत लाभकारी है।

2.12 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 राग मियाँ मल्हार की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

1 काफी 2 भैरव 3 पूर्वी 4 कल्याण ऊ 1

2 राग मियाँ मल्हार का समप्रकृतिक राग कौन सा है।

1 जोग 2 कल्याण 3 बहार 4 सारंग ऊ 3

3 मियाँ मल्हार का मुख्य अंग क्या है।

1 म रे प 2 सा रे ग 3 नि रे ग 4 सा ग प ऊ 1

4 राग मियाँ मल्हार के आरोह में कौन सा स्वर नही लिया जाता है।

1 म 2 रे 3 प 4 ग ऊ 4

5 राग मियाँ ममहार का प्रारम्भ किस स्वर से किया जाता है।

1 सा 2 रे 3 ग 4 नि ऊ 1

6 राग मियाँ ममहार की प्रकृति कौन सी है।

1 चंचल 2 गंभीर 3 शान्त ऊ 1

7 राग बहार की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

1 काफी 2 भैरव 3 पूर्वी 4 कल्याण ऊ 1

2.13 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

1 राग अल्हैया बिलावल की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

2 राग अल्हैया बिलावल का समप्रकृतिक राग कौन सा है।

3 अल्हैया बिलावल और बिलावल में क्या अन्तर है।

4 अल्हैया बिलावल में किस स्वर को आरोह में नही लिया जाता है।

5 राग बिलावल का प्रारम्भ किस स्वर से किया जाता है।

6 राग अल्हैया बिलावल की प्रकृति कौन सी है।

7 राग बहार की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

2.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

सितार प्रबन्ध, डॉ बिरेन्द्र नाथ मिश्र

संगीत सुर और साज, डॉ एस एन मिश्रा

राग परिचय, हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, भाग 1

संगीतांजली, पं० ओमकारनाथ ठाकुर, भाग 3

BA VTH SEMESTER **Course No: MU-501 Indian Music**

SECTION A **LESSON 3**

Tittle- Compare and contrast

3.1 प्रस्तावना

3-2 उद्धेश्य

3.3 परिचय राग बिलावल

3.4 राग अल्हैया बिलावल की विशेषताएँः–

3.5 राग अल्हैया बिलावल और बिलावल की तुलना

3.6 राग बहार और राग मियां मल्हार की तुलना

3-7 सारांश

3.8 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

3-9 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

3-10 सन्दर्भ ग्रन्थ

3-1 प्रस्तावना

प्रत्येक राग एक दूसरे राग से कुछ न कुछ भिन्न पाये जाते है किसी के स्वरो से अन्तर हो जाता है तो किसी के चलन से और किसी के वादी स्वरों से। हर राग की उत्पति अलग अलग थाटों से हुई है। इन्ही सब भिन्नताओं का वर्णन इस अध्याय में किया है।

3.2 उद्धेश्य

इस अध्याय का मुख्य बिन्दु पाठ्क्रम के रागों का ज्ञान कराना है। जिसमें राग अल्हैया बिलावल से राग बिलावल की तुलना करके बताया गया है जिससे विधार्थी लाभ उठा सके।

3.3 परिचय– राग बिलावल

बिलावल थाट से उत्पन्न यह एक प्राचीन तथा लोकप्रिय राग है। आरोह में मध्यम वर्जित और अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होने से यह एक षाडव–सम्पूर्ण जाति का राग है। इसके आरोह में शुद्ध निषाद तथा अवरोह में दोनों निषाद का प्रयोग होता है। यह एक प्रातर्गेय राग है। इसमें दो निषाद लगते हैं, आरोह में मध्सम वर्जित है। राग अल्हैया बिलावल के धैवत पर एक विशेष प्रकार का आन्दोलन किया जाता है। सा रे ग प ध[नि] आरम्भ में इस धैवत पर शुद्ध निषाद का स्पर्श होता है और तत्पश्चात् कोमल निषाद के स्पर्श से इसे आन्दोलित किया जाता है और तभी यह धैवत बिलावल के स्वरूप को खडा करता है। साथ ही पूर्वांग में भी एक विशेष ढंग से स्वरों को छुआ जाता है। उत्तरांग में धैवत का विशेष उच्चारण इस राग को गौड़मल्हार आदि रागों से बचा कर इसका अपना रागत्व स्थापित करेगा।

राग अल्हैया बिलावल की प्रकृति तार सप्तक की ओर जाने की रहती है। स्वभावतः यह गंभीर नही है, यद्यपि इसके अन्य प्रकार गंभीरता से गाये जाते हैं।

प्रचार में सामान्यता बिलावल कहने से लोग अल्हैया बिलावल ही समझते हैं। पं० भातखण्डे जी ने अपनी क्रमिक पुस्तक मालिका में केवल एक शुद्ध निषाद युक्त बिलावल की भी कुछ रचनाएँ दी हैं। कोमल निषाद का प्रयोग ही अल्हैया बिलावल को उपर्युक्त एक निषाद वाले बिलावल से पृथक करता है।

3.4. राग अल्हैया बिलावल की विशेषताएँः–

1 स्वय ंनाम से स्पष्ट होता है कि अल्हैया बिलावल राग बिलावल का एक प्रकार है। बिलवल के कई अन्य प्रकार भी प्रचार में है।

2 आरोह में ऋषभ और अवरोह में गंधार अधिकतर वक्र प्रयोग किया जाता है, जैसे– सा, ग रे ग प,म ग म रे ।

3 शुद्ध निषाद का प्रयोग आरोह में और कोमल निषाद का अल्प प्रयोग केवल अवरोह में दोनों धैवतों के मध्य किया जाता

जैसे– सां नि ध प, ध नि॒ ध प।

4 यह राग उत्तरांग प्रधान है अर्थात इसका वादी स्वर सप्तक के उत्तरांग म प ध नि सां से लिया गया है। इस राग की चलन भी अधिकतर तार सप्तक में ही अधिक होती है।

5 वर्तमान समय में अल्हैया बिलावल का प्रचार इतना बढ गया है कि केवल बिलावल कह देने से ही लोग अल्हैया

6 बिलावल ही समझते हैं, जबकि बिलावल और अल्हैया बिलावल ये दो अलग अलग राग हैं।

7 अल्हैया बिलावल में सा, रे तथा प स्वरों पर न्यास किया जाता है।

3.5 राग अल्हैया बिलावल की तुलना

राग अल्हैया बिलावल और राग बिलावल की तुलना–

अल्हैया बिलावल	बिलावल
1 राग अल्हैया बिलावल, बिलावल थाट का जन्य राग है।	1 राग बिलावल अपने थाट का आश्रय राग है।
2 राग अल्हैया बिलावल में कोमल निषाद, सभी स्वर शुद्ध प्रयोग किये जाते हैं।	2 राग बिलावल में भी सभी स्वर शुद्ध प्रयोग होते हैं।
3 राग अल्हैया बिलावल के आरोह में मध्यम वर्जित है और अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होता है।	3 राग बिलावल में सातों स्वरों का प्रयोग होता है।
4 राग अल्हैया बिलावल की जाति षाडव सम्पूर्ण है।	4 इसकी जाति सम्पूर्ण सम्पूर्ण है।
5 इसका वादी स्वर धैवत तथा संवादी स्वर गांधार है	5 इसका वादी स्वर धैवत तथा संवादी स्वर गांधार है

6 इसके गायन का समय प्रातः प्रहर का अंतिम भाग	6 इसका गायन समय प्रातःकाल का प्रथम प्रहर माना गया है।
7 राग अल्हैया बिलावल के आरोह में मध्यम स्वर वर्जित है	7 बिलावल में कोई भी स्वर वर्जित नही है।
8 न्यास पंचम स्वर पर।	8 न्यास धैवत स्वर पर ।
9 मुख्य अंग– रे ग प म ग रे, नि,सा[ध], निसा।	9 मुख्य अंग– ग म रे ग प नि ध [नि]ध [नि]सां ध [नि]ध प।

3.6 राग बहार और राग मियां मल्हार की तुलना

राग बहार	**राग मियां मल्हार**
1 राग बहार, काफी थाट का जन्य राग है।	1 राग **राग मियां मल्हार** काफी थाट का जन्य राग है।
2 राग बहार में कोमल निषाद,कोमल ग सभी स्वर शुद्ध प्रयोग किये जाते हैं।	2 राग **राग मियां मल्हार** में भी सभी स्वर शुद्ध प्रयोग होते हैं। और ग और नि कोमल लगते हैं।
3 राग बहार के आरोह रे स्वर को वर्जित करके जाते है और अवरोह में ध स्वर का प्रयोग नही होता है।	3 राग **राग मियां मल्हार** में दोनों नि प्रयोग होते है।
4 राग बहार की जाति षाडव षाडव है।	4 इसकी जाति षाडव षाडव है।
5 इसका वादी स्वर रे तथा संवादी स्वर प है।	5 इसका वादी स्वर म तथा संवादी स्वर सा है
6 इसके गायन का समय वर्षा काल	6 इसका गायन समय वर्षा काल है।

7 न्यास रे और पंचम स्वर पर।   7 न्यास म और सा पर।

8 मुख्य अंग– सा म प म ग, म नि ध निसा। 8 मुख्य अंग– म रे प, म प नि ध [नि]ध [नि]सां

3.7 सारांश

इस अध्याय में पाठ्सक्रम में दिये गये सभी रागों के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त होती हैं सभी रागों की तुलना से अनेक बिन्दु उजागर होते है।

3.8 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 राग मियां मल्हार की जाति क्या है।

1 षाडव षाडव 2 षाडव औडव 3 षाडव सम्पूर्ण 4 सम्पूर्ण सम्पूर्ण ऊ 1

2 राग बहार की जाति क्या है।

1 षाडव षाडव 2 षाडव औडव 3 षाडव सम्पूर्ण 4 सम्पूर्ण सम्पूर्ण ऊ 1

3 राग बहार का वादी स्वर क्या है।

1 रे 2 ग 3 म 4 प ऊ 1

4 राग मियाँ मल्हार का वादी स्वर क्या है।

1 रे 2 ग 3 म 4 प ऊ 3

5 राग मियाँ मल्हार का गायन समय क्या है।

1 वर्षा काल 2 बसंत ऋतु 3 मध्य रात्रि 4 प्रातःकाल ऊ 1

3.9 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

5 राग बिलावल का प्रारम्भ किस स्वर से किया जाता है।

6 राग अल्हैया बिलावल की प्रकृति कौन सी है।

7 राग बहार की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

8 राग बहार का समप्रकृतिक राग कौन सा है।

9 बहार और मियॉ मल्हार में क्या अन्तर है।

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

सितार प्रबन्ध, डॉ बिरेन्द्र नाथ मिश्र

संगीत सुर और साज, डॉ एस एन मिश्रा

राग परिचय, हरिशचन्द्र श्रीवास्तव, भाग 1

संगीतांजली, पं० ओमकारनाथ ठाकुर, भाग 3

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 4**

गायन की विभिन्न शैलियां

दादरा, कजरी, सादरा, होरी, त्रीवट, स्वरमलिका, रागमलिका

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्धेश्य

4.3 दादरा

4.4 कजरी

4.5 सादरा

4.6 होरी

4.7 त्रिवट

4.8 स्वरमलिका

4.9 रागमलिका

4.10 सारांश

4.11 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

4.12 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

4.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.1 प्रस्तावना

गीत में गीत है और गीत में जीवन का चिन्ह। यही कारण है कि जीवन और गीत की धाराएँ अनादिकाल से चली आ रही हैं।

प्राचीन काल से भारतीय शास्त्री संगीत अपने नियमों का पालन करता हुआ आगे को बढ़ रहा है। इसमें गायन की अनेक विधाएँ अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं उनमें से कुछ का उल्लेख इस प्रकार है।

दादरा, कजरी, सादरा, होरी, त्रीवट, होरी, स्वरमलिका, रागमाला आदि।

4.2 उद्धेश्य

प्राचीन काल से भारतीय शास्त्री संगीत अपने नियमों का पालन करता हुआ आगे को बढ़ रहा है। इसमें गायन की अनेक विधाएँ अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं उनमें से कुछ का उल्लेख इस प्रकार है।

4.3 दादरा (Dadra)

ठुमरी से मिलता–जुलता गीत का एक विषिष्ट प्रकार दादरा है। मूलतः दादरा ताल में ही गाए जाने के कारण यह दादरा कहलाता है, किन्तु अब यह जरूरी नहीं रह गया है कि इसका गायन केवल दादरा ताल में ही हो। आजकल कई ठुमरियां दादरा में और दादरे कहरवा ताल में भी गाई जाती हैं। ठुमरी की भान्ति यह गायन शैली भी उप–षास्त्रीय संगीत वर्ग में रखी जाती है। ठुमरी और दादरा परस्पर समकक्ष है, क्योंकि दोनों में लगभग एक समान ही अलंकारणों का प्रयोग किया जाता है। डॉ. गीता पैन्तल के अनुसार वस्तुतः ठुमरी और दादरे का इतना समीप का सम्बन्ध है कि दादरे का नाम लेते ही ठुमरी का स्वरूप मस्तिष्क में चमक उठता है। दादरे में स्वरों का लगाव और लय अलग होती है। प्रायः द्रुत और कभी–कभी मध्य लय रहती है। बन्दिष की रचना ऐसी होती है, जो झूलती हुई चलती है। ‘बनाओ बतियां’ प्रसिद्ध दादरा है, जिसमें लय का झूलना स्पष्ट दिखाई देता है।

दादरा की उत्पत्ति और उद्भावक के विषय में कोई निष्चित प्रमाण नहीं मिलते। सम्भवतः यह गायन प्रकार मूलतः लोक–संगीत से आया है, इसलिए उसमें लय की झूल बड़ी सहज होती है। इसमें बेलदनाव भी लय के साथ होता है। दादरे गाते समय बीच–बीच में हृदय को स्पर्ष करने वाले दोहे, सैदये तथा शेर आदि का भी प्रयोग कर लिया जाता है। आजकल दादरा जिस ढंग से गाया जाता है। वह प्रायः ठुमरी से अलग नहीं दिखाई देता।

मिश्रण की प्रवृत्ति इतनी अधिक हो गई है कि गायक–वादक ठुमरी और दादरे में लगभग एक ही ढंग का काम करे हैं। दादरा गयन विद्या में शृंगार रस का ही मुख्य रूप से व्यवहार होता है। इन गीतों को मुख्य विषय प्रेम, व्यापार, विरह की वेदना, प्रेमियों की षिकवा–षिकायतों और नाज़–नखरों से युक्त होता है। पटियाला घराने के कलाकारों द्वारा दादरों का प्रचार–प्रसार होता रहा है। फिल्म संगीत में भी दादरों पर आधारित अनेक प्रकार के गीत बनाए गए, जो लोकप्रिय भी हुए।

सांगीतिक दृष्टि से दादरा में ठुमरी प्रधान रागों का मुख्यतः प्रयोग किया जाता है, परन्तु दादरे की प्रस्तुति ठुमरी से भिन्न होती है। दादरे मं बोलों का वजन तथा बोल–बांट ताल के बराबर बिठाए जाते हैं। विस्तारयुक्त आलाप के लिए स्थान नहीं होता। मध्य लय या द्रुत लय के दादरे ही अधिक प्रस्तुत किए जाते हैं। बोल–बनाव, बोल–बांट, भावपूर्ण शब्द समायोजन की पुनरावृत्ति तथा लघु लहकदार काम, ये सभी विषेषताएँ दादरा के प्राणतत्व माने जाते हैं। दादरे के मूलभूत तत्व बराबर, मध्य या द्रुत लय में बोल प्रयुक्त करना, बोल–बांट से अलंकृत करना, छोटी–छोटी कहन कहना, सम से एक मात्रा विलम्ब से चलना, आड़युक्त कहना तथा पुनः सम परआ जाना आदि हैं। स्थायी व अन्तरे के बीच टुकड़े प्रयुक्त होते हैं तथा अन्त में लग्गी लगाकर दादरे को प्रभावी बनाया जाता है। निःसंदेह ही दादरा एक विषिष्ट, रंजक एवं भावपूर्ण गीत का प्रकार है। अतः इसके उचित विकास एवं व्यवहार के लिए अपेक्षित प्रयत्नों का होना आवष्यक है।

4.4 कजरी (Kajri)

हिन्दी भाषा के लोक–गीतों में कजरी अधिक लोकप्रिय है। पूर्वी उत्तरप्रदेष में इसका अत्यधिक प्रचार है। कहीं–कहीं इसको कजली भी कह दिया जाता है। भाद्रों मास की कृष्ण पक्ष की तृतीया को एक त्यौहार मनाया जाता है, जिसे 'कजली अथवा कजरी व्रत' कहते हैं। यह स्त्रियों का त्यौहार है। इस दिन स्त्रियाँ रात भर जागरण करती हैं तथा सुन्दर शृंगार रस प्रधान गीतों को गाकर मनोरंजन करती हैं। बरसात के दिनों में गाँवों में सुन्दर तथा हंसीली कजरियाँ सुनने को मिलती हैं। युवतियाँ किसी बड़े पेड़ पर झूल डालती हैं और उस पर लम्बी–लम्बी पेंग मारते हुए कजरी गाती हैं। कजली का मुख्य विषय राधा–कृष्ण से सम्बन्धित संयोग तथा वियोग शृंगार रहता है।

एक समय था जब इस गीत को श्रृंगार की अत्यधिक भावना के कारण बहुत अष्लील बना दिया गया था, परन्तु भारतेन्दु हरिष्चन्द्र तथा उनके साथियों ने इस क्षेत्र में प्रवेष करके बहुत से सुधार किए। इन सुधारों के कारण आज कजरियों में श्रृंगार भावना के साथ अन्य भावनाओं को भी स्थान प्राप्त है। इन गीतों में स्वदेष–प्रेम की भावना की पुष्टि करते हुउए देषद्रोही को बुरा–भला कहा गया है। कजली में आजकल भक्ति–रस को भी स्थान प्राप्त है। कजली गाने वालों के अपने अलग–अलग समूह होते हैं, जिन्हें 'अखाड़े' कहते हैं। प्रत्येक अखाड़े का एक मुखिया होता है, जो नई–नई कजरियों को अपने अखाड़े के गाने वालों को सिखलाता है। कभी–कभी दो अखाड़ों में होड़ लगती है और सवाल–जवाब की भान्ति घन्टों कजलियाँ गायी जाती हैं।

कजरी ऐसी लोकप्रिय गीत शैली है, जो सड़कों, चौराहों, बाग–बगीचों, मेले तथा सामान्य गोष्ठियों से लेकर महफिलों तक में भी गाई जाती है। प्रचलित धुनों को लेकर अलंकार व मुर्की आदि के साथ शास्त्रीय पद्धति से गाने पर पर यह गायन उपषास्त्रीय संगीत के वर्ग में रखा जाने लगा है। इस शैली में शब्दों तथा शब्दों में निहित भावनाओं के प्रस्तुतीकरण का महत्त्व दिया जाता है। इसलिए यह सभी वर्ग के लोगों को प्रभावित करती है। कजरी गीतों में लोकतत्व की प्रधानता रहती है और राग नियमों में षिथिलता होती है। हृदय पक्ष की प्रधानता के कारण मन की उमंग से स्वतः स्फूर्त ये गीत विष्लेषण ककरने पर स्वीकृत राग नियमों की दृष्टि से खरे नहीं उतरते। इनकी धुनों में प्रायः अनेक रागों की छाया दिखाई पड़ती है। कजरी अधिकतर मध्यलय में गाई जाती है।

कजरी के रचयिता तथा विषेष गायक 'गुरू' कहलाते हैं। इन रचयिताओं की विषेषता यह है कि षिक्षित न होते हुए भी ये सांगीतिक शब्दों का प्रयोग बड़े ही उत्तम ढंग से करते हैं। छंद एवं ताल की परिभाषा न जानते हुए भी इनके छन्दों एवं तालों में तनिक भी त्रुटि नहीं होती। एक अन्य गुण इनमें यह भी है कि अतिषीघ्र कजरी से सम्बन्धित किसी विषय की रचना कर सकते हैं। कजरी का मुख्य स्थान बनारस और मिर्जापुर है। यहाँ सावन के महीने में कजरी गाई जाती है। इसके अतिरिक्त लखनऊ व कानपुर आदि के आस–पास के क्षेत्रों में भी कजरी बहुत लोकप्रिय तथा मधुर मानी जाती है। मिर्जापुर में सावन में कजरी का दंगल होता है। इसमें सारी रात कजरी गाने वाली मण्डलियाँ भाग लेती हैं।

श्रृंगार कजरी गीतों का प्रमुख रस होता है। फलतः कजरी गतों की शब्द योजना अधिक श्रृंगारपरक रही है। इसमें प्रायः किसी स्त्री की ओर से प्रणय अथ्ज्ञवा विरह की अभिव्यक्ति दृष्टिगोचर होती रहती है। सावन के महीने में जब कजरी का दंगल होता है, तो उसमें अनेक मण्डलियाँ भाग लेती हैं। कजरी अखाड़े के प्रसिद्ध गायकों के अतिरिक्त जिन कलाकारों ने कजरी गायन में ख्याति अर्जित की है, उनमें गिरिजा देवी का नाम उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त मुन्नी बाई, सिद्देष्वरी देवी, बब्बा बाई, राधे रानी, बेगम अख्तर, पं. महादेव मिश्र तथा शोभा गुर्टू आदि ने कजरी क्षेत्र को अपने गायन से समृद्ध किया है। पं. राम जी प्रसाद मिश्र ने कजरी गायन में नए प्रयोग किए है।

4.5 सादरा (Sadra)

सादरा झपताल में गाया जाता है और इसमें दुगुन तथा यौगुन कहने का रिवाज है। इसके अलावा आड़ी–तिरछी बोल बांट भी इसमें अच्छी लगती है। धुपद और धमार गाने के लिए जैसे गला सुरीला और दमदार होना चाहिए, उसी प्रकार सादरा गाने के लिए गाये का कण्ठ सुरीला और रोबीला होना चाहिए। इसमें ख्याल की तानें और फंदे नहीं होते। सुर में सीधे–साधे शब्दों को रोचक ढंग से ताल में कहना ही आवष्यक होता है। डॉ. गीता पैन्तल के अनुसार जो ध्रुपद दस मात्राओं में गाए जाते थे, उन्हें ही सादरा कहा जाता है तथा अन्य एक विद्वान के अनुसार सादरा एक विषेष प्रकार का तेज गति में गाया जाने वाला ध्रुपद ही है, जो आमतौर पर झपताल में गाया जाता है। पंजाब में ध्रुपद व धमार नामक गीत शैली के प्रचलित होने के भी प्रमाण मिलते हैं। ताल का विषेष ज्ञान और अनुभव इसकी अनिवार्यता है। जिस गायक का ताल पक्ष अच्छा नहीं होता, उसके कण्ठ से सादरा कभी अच्छा नहीं लग सकता। इसमें गले को स्वतन्त्रता से हिलाना–डुलाना वर्ज्य है। सच्चे स्वरों को सुरीली आवाज़ व साफ–साफ शब्दों में कुषलता से कहना इस शैली का प्रथम गुण एवं विधान है।

ध्रुपद और धमार की भांति इस शैली का प्रचार भी अब धीरे–धीरे कम होता प्रतीत हो रहा है। संगीत विद्यालयों के विद्यार्थी तो अवष्य अपनी पाठ्य–पुस्तक से इसके बारे में कम से कम इसकी परिभाषा जान लेते हैं, किन्तु सामान्य रूप से न तो गायक सादरा गाते हैं और न श्रोता उसे सुनते हैं। यदि संगीत षिक्षक इस ओर ध्यान दे तो सम्भव है कि तरुण गायकों को

4.6 होरी (Hori)

जब 'होरी' नाम के गीत को धमार ताल में गाते हैं, तो उसे 'धमार' कहा जाता है। धमार–गायन में प्रायः ब्रज की होली का वर्णन रहता है। धमार में दुगुन, चौगुन, बोलतान, गमक इत्यादि का प्रयोग होता है, अतः कठिन गायकी है। धमार के गायकों को स्वर, ताल और राग का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। प्रायः देखा जाता है कि धामार में ख्याल के समान तानें नहीं ली जाती।

4.7 त्रिवट (Tirvit)

जब किसी तराने में मृदंग के बोलों का प्रयोग किया जाता है, तो उस विषिष्ट गायन शैजली को 'त्रिवट' कहते हैं। प्राचीन काल में आलीक्रम प्रबंध के एक 'केवाड़' नामक प्रबन्ध या गीत के प्रकार से इस गायन शैली की उत्पत्ति मानी जाती है। दक्षिण में इसे 'चोल्लुकेट्टु' कहते हैं। इस गायन शैली में स्वर, राग, ताल व लय का ही महत्त्व है। इसमें भाव का महत्त्वन कला पक्ष की अपेक्षा कमन रहता है। इसमें कविता नहीं होती, बल्कि तराने के बोलों को ही मृदंग अथवा पखावज की सहायता से छन्दोबद्ध करके स्वर और ताल के साथ गाया जाता है। यह गायन शैली ख्याल तथा ध्रुपद दोनों अंगों से गाई जाती है। यह अधिकतर तीन ताल, कहरवा ताल तथा द्रुत गति के साथ चंचल प्रकृति के रागों के साथ गाई जाती है। वर्तमान में इस गायन शैली का प्रचार कम है। अतः विषिष्ट कार्यक्रमों में ही इस गायन शैली का प्रदर्षन देखने को मिलता है।

4.8 स्वरमलिका (Swarmalika)

राग के नियमानुसार स्वर और तालयुक्त रचना स्वरमालिका कहलाती है। इसका प्रयोजन केवल राग के स्वरूप को व्यक्त करना है। विषेष रूप से विद्यार्थियों के लिए इसकी रचना की जाती है। रागमालिका भिन्न–भिन्न रागों में अलग–अलग खंडों में गाई जाने वाली एक लम्बी रचना है। प्रयुक्त राग में बना स्वरासमूह, जो प्रथम खंड में मिलने के लिए सहायता करता है, 'मुकुटस्वर' कहा जाता है। सम्पूर्ण खंडों को निर्धारित भिन्न–भिन्न रागों में गाने के पष्चात् अंतिम राग से प्रथम प्रयुक्त राग तक के बीच के सम्पूर्ण रागों को उलटे क्रम से एक–दो ताल आवर्तनों के चिट्टेस्वर गाने के पष्चात् 'मुकुटस्वर' गाने के साथ ही पल्लवी में

मिल जाना होता है। श्रीस्वातितिरूताल की शंकराभरणम् राग और रूपक ताल से प्रारम्भ होने वाली रागमलिका 'पत्रगेन्द्रषयन' व 'दषावतार' आदि बहुत ही प्रसिद्ध रचनाएं हैं। प्रथम 'पत्रगेन्द्रषयन' रूपकतालीय रचना में शंकराभरण, कांबोजी, नीलाम्बरी, भैरवी, तोड़ी, सुरटी, नाथनामक्रिया तथा भुपालम् आदि रागों का प्रयोग किया गया है।

4.9 रागमलिका (Ragmalika)

रागमलिका में एक के बाद एक कई रागों में गीत खण्डों को गाया जाता है, लेकिन ताल शुरू से अन्त तक एक ही होती है। राग बदलते जाने से श्रोताओं की रुचि शुरू से आखिर तक बनी रहती है। आजकल जितने गीत प्रकार प्रचलित हैं, उनमें यह सबसे लम्बा है। 'महावैद्यनाथ अय्यर' की 'बहत्तर मेल' रागमालिका को गाने में दो घंटे का समय लगता है। इसमें रागों के चुनाव और क्रमयोजना की पूरी स्वतन्त्रता रचयिता को रहती है। इसकी पल्लवी और अन्तिम चरणम् किसी प्रसिद्ध राग में होना चाहिए और पहला राग ऐसा होना जरूरी है, जिसमें गान समय का बन्धन न हो। इसमें एक राग की समाप्ति और दूसरे राग के शुरू होने के बीच में सरगम होती है, जो दोनों को जोड़ती है। रागकदम्ब प्रबन्ध से यह इतने अंष में मिलता है कि इसमें कई राग रहते हैं। रागकदम्ब में कई रागों के साथ–साथ अनेक ताल और अनेक ताल और अनेक वृत्त भी होते हैं। अतः यह उससे सर्वथा भिन्न गायन शैली है।

4.10 सारांश प्राचीन काल तथा आधुनिक काल गये विधाएं अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन्हीं की सहायता से हम अपनी संस्कृति और परम्परा को समझ सकते है।

4.11 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 कजरी का सम्बध किस राज्य से है।

1 बनारस 2 लखनऊ 3 पंजाब 4 दिल्ली ऊ 1

2 दादरा किस ताल में गाया जाता है।

1 एक ताल 2 कहरबा 3 दादरा 4 तीनताल ऊ 3

3 कजरी किस विधा के अन्तर्गत आती है।

1 शास्त्रीय संगीत 2 लोक संगीत 3 उपशास्त्रीय ंगीत 4 फिल्म संगीत ऊ 2

4 होरी कब गाई तजाती है।

1 होली में 2 सावन मे 3 वर्षा ऋतु में 4 पतझड में ऊ 1

4.12 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

Q. दादरा के विषय मे विस्तार से लिखें ?

Q. कजरी के बारे में आप कया समझते है।

Q. सादरा की व्याख्या लिखें।

Q. त्रिवट किसे कहते हैं।

Q. कजरी और होरी में कया अन्तर है।

Q. स्वरमलिका और रागमलिका में कया अन्तर है।

4.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

संगीत रत्नावली अशोक कुमार यमन,
राग परिचय,हरीशचन्द्र श्रीवास्तव
संगीत विषारद ,प्रभुलाल वसंत

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 5**

भारतीय शास्त्रीय संगीत के 12 स्वरों की स्थापना 22 श्रुतियों पर प्राचीन काल, मध्यकाल और आधुनिक काल के अनुसार

5. प्रस्तावना

5.1 उद्धेश्य

5.1.1 प्राचीन, मध्य और आधुनिक काल श्रुति स्वर विभाजन

5.2 प्राचीन श्रुति स्वर विभाजन

5.2.1 शारंगदेव के स्वर

5.3 मध्यकाल श्रुति स्वर विभाजन

5.3.1 लोचन कृत राग तिरंगणी द्वारा स्वर स्थापना

5.3.2 अहोबल द्वारा रचित संगीत परिजात के स्वर

5.3.3 राममात्य द्वारा स्वरमेल कला निधि के स्वर

5.3.4 श्री व्यंक्टमुखी चतुर्दन्डि प्रकाषिका के स्वर

5.3.5 श्री निवास कृत्य राग तत्व विबोध के स्वर

5.4 आधुनिक श्रुति स्वर विभाजन

5.4.1 22 श्रुतियों के नाम

5.5 तीनों कालों में श्रुति स्वर विभाजन में समानता और विभिन्नता

5.6 सारांश

5.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

5.8 . परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.1 प्रस्तावना

प्राचीन मध्य व आधुनिक काल में श्रुतियों पर शुद्ध विकृत स्वरों की स्थापना प्राचीन से लेकर आधुनिक काल तक के बड़े–बड़े संगीत विद्वानों ने श्रुति समस्या पर वैज्ञानिक प्रकाष डालने का प्रयास किया।

प्राचीन काल का सर्वोत्कृष्ट और प्रामाणिक ग्रन्थ भरतमुनि का नाट्यषास्त्र है जिसकी रचना लगभग चौथी शताब्दी में हुआ है। उसी का आधार मानकर परवर्ती आचार्यों ने श्रुति स्वर के सम्बन्ध में अपने–अपने विचार व्यक्त किये हैं।

5.1 उद्धेश्य

शारंगदेव द्वारा रचित ग्रन्थ संगीत रत्नाकर 13वीं शताब्दी का ग्रन्थ माना जाता है। इस ग्रन्थ में शारंगदेव ने अपने स्वरों की स्थापना इस प्रकार की है। भरत ने 9 स्वरों का वर्णन किया है परन्तु शारंगदेव ने शुद्ध और विकृत 19 स्वरों को माना है।इसी प्रकार प्रत्येक संगीत कारो ने स्वरो की स्थापना अपने अपने अनुासर की है। इस अध्याय का मुख्य बिन्दु यही है कि जिससे 22 श्रुतियों पर स्वरो की स्थापना के वर्णन को भली प्रकार से इस समझा जा सके।

श्रुति

संगीत में प्रयोग होने वाली मधुर ध्वनि को जिसे हम स्पष्ट सुन सकें और अलग अलग पहचान सकें उसे श्रुति कहते है। हमारे संगीत में 22 ऐसे नाद हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से सुना जा सकता है इन्हीं 22 नादों को श्रुति के नाम से जाना जाता है। इन्हीं श्रुतियों को विभाजन करके स्वरों का नाम दिया गया है। श्रुतियों पर स्वर विभाजन प्राचीन और मध्य ग्रन्थकारों ने इस तरह किया है स म प की चार–चार, रे ध की तीन–तीन, ग नी की दो–दो। प्राचीन ग्रन्थकार अपने स्वर –चौथी श्रृति पर स, सातवी पर रे, नौवी पर ग, 13वीं पर म, 17वीं पर प, बीस पर ध और बाईसवीं पर नी को मानते हैं।

इसके इलावा आधुनिक संगीतकार, पहली श्रुति पर स, पाँचवी पर रे, अठवीं पर ग, दसवीं पर म, चौदवीं पर प, 18वीं पर ध और 21 पर नी को स्थापित करते हैं। नीचे तालिका से स्पष्ट हो जाएगा।

प्राचीन काल

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
स			रे		ग					म				प			ध		नी		

आधुनिक काल

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
सरे			ग			म					प			ध		नी					

5.1.1 प्राचीन, मध्य और आधुनिक काल श्रुति स्वर विभाजन

तीन कालों के शस्त्रकारों ने स म प की चार–चार, रे ध की तीन–तीन और ग नी की दो–दो श्रुति वाले सिद्धांत को स्वीकार किया है परन्तु शुद्ध और विकृत स्वरों की स्थापना उन्होंने अलग–अलग तरह से की है।

5.2 प्राचीन श्रुति स्वर विभाजन

प्राचीन ग्रन्थकारों में भरत का नाटयषस्त्र ही आधार ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की रचना 4थी शताब्दी से लेकर 6वीं शताब्दी के बीच हुई ऐसा माना जाता है। इस ग्रन्थ में भरत ने साथ शुद्ध स्वरों के साथ साथ दो विकृत स्वर, अंतर गंधार और काकली निषाद माने हैं। इस तरह उन्होंने अपने स्वरों की संख्या 9 बताई है। भरत ने अपने स्वरों की स्थापना ऊपर दी हुई प्राचीन काल तालिका के अनुसार की है। उन्होंने अंतर ग को 11वीं श्रुति पर और काकली निषाद को दूसरी श्रुति पर स्थापित किया है। भरत ने श्रुतियों को समान माना है।

भरत के स्वर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
काकलीस					रे		ग		अतरंग		म				प			ध		नी	
	नी																				

5.2.1 शारंगदेव के स्वर

शारंगदेव द्वारा रचित ग्रन्थ संगीत रत्नाकर 13वीं शताब्दी का ग्रन्थ माना जाता है। इस ग्रन्थ में शारंगदेव ने अपने स्वरों की स्थापना इस प्रकार की है। भरत ने 9 स्वरों का वर्णन किया है परन्तु शारंगदेव ने शुद्ध और विकृत 19 स्वरों को माना है। इन्होंने भी स म प की चार–चार रे ध की तीन–तीन ग नी की दो–दो श्रुतियों को माना है और भरत की तरह अंतिम श्रुति पर शुद्ध स्वरों को माना हैं। उन्होंने 7 शुद्ध और 12 विकृत स्वर इस तरह माने हैं।

पहली श्रुति पर कौषिक नी, दूसरी पर काकली नी, तीसरी पर च्युत षडज, चौथी पर षडज, पांचवीं पर कौषिक षडज, छटी पर अन्त षडज, सातवीं पर रिषभ, आठवीं पर विकृत रिषभ, 9वीं पर शुद्ध गंधार, 10वीं पर साधारण गंधार, 11वीं पर अन्तर ग, 12वीं पर च्युत मध्यम, 13वीं पर म, 14वीं पर कौषिक मध्यम, 15 पर विकृत मध्यम, 16वीं पर त्रिश्रुति पंचम, 17 पर प, 18वीं पर मध्यम ग्राम धैवत, 20वीं पर शुद्ध ध, 22वीं पर शुद्ध नी।

प्राचीन ग्रन्थकार अपनी श्रुतियों को सामान्तर दूरी पर मानते थे। वह प्रत्येक श्रुति को उसके आगे वाली श्रुति के बराबर मानते थे। जितना अंतर पहली और दूसरी श्रुति के बीच था उतना ही वह दूसरी और तीसरी के बीच मानते थे। उन्होंने इस अन्तर को प्रमाण श्रुति का नाम दिया।

5.3 मध्यकाल श्रुति स्वर विभाजन

संगीत के इस मध्यकाल का समय 14वीं शताब्दी से 18वीं शताब्दी तक है। इस काल के ग्रन्थकारों ने भी प्राचीन काल की तरह शुद्ध स्वरों की श्रुतियों पर स्थापित किया है। स म प की चार–चार रे ध की तीन–तीन और ग नी की दो–दो और अंतिम श्रुति पर स्वर स्थापना की है।

शुद्ध स्वर

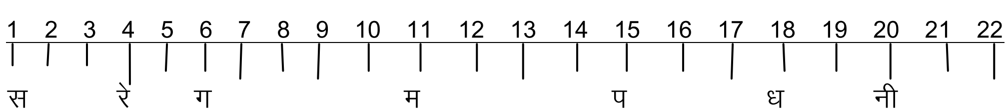

इस काल में निम्नलिखित ग्रन्थों द्वारा श्रुति स्वर विभाजन का पता चलता है।

5.3.1 लोचन कृत राग तिरंगणी द्वारा स्वर स्थापना

यह ग्रन्थ लगभग 15वीं शताब्दी में सन् 1410 को लिखा गया। इन्होंने अपने 7 शुद्ध और 11 विकृत कुल 18 स्वर माने हैं। परन्तु वह अपने रे म और नी शुद्ध स्वरों को µ तीव्र रे, अति तीव्रतम ग तथा तीव्रतम ध का नाम देते थे। उन्होंने अपने स्वरों की स्थापना इस तरह की है। पहली श्रुति पर तीव्र नि, दूसरी पर तीव्रतम नी, तीसरी पर तीव्रतम नी, चौथी पर स 6वीं पर कोमल रे, सातवीं पर शुद्ध रे, 9वीं पर शुद्ध ग, दसवीं पर तीव्र ग, 11वीं पर तीव्रतर ग, 12वीं पर तीव्रतम ग, 13वीं पर शुद्ध म, 14वीं पर तीव्र म, 15वीं पर तीव्रतर म, 17 पर प, 20वीं पर ध और 22वीं पर नी।

5.3.2 अहोबल द्वारा रचित संगीत परिजात के स्वर

यह ग्रन्थ 17वीं शताब्दी में लगभग 1650 में लिखा गया। इस ग्रंथ में उन्होंने 29 स्वर माने हैं परन्तु वीणा पर स्वर स्थापित करते समय स्वरों की संख्या 12 ही मानी है जिसमें सासत शुद्ध और 5 विकृत स्वर हैं। इनका शुद्ध सप्तक आधुनिक काफी थाट के समान था। इन्होंने पूर्ण रूप से अपने ग्रन्थ में स्वरों का वर्णन किया है जो इस तरह है – चौथी श्रुति पर स, 5वीं पर पूर्व रे, 6वीं पर कोमल रे, 7वीं पर पूर्व ग, 9वीं पर ग, 13वीं पर म, 17वीं पर प, 18वीं पर ध, 19वीं पर कोममल ध, 20वीं पर पूर्व नी, 21वीं पर कामल नी, और 22वीं पर नी।

यह ग्रन्थ इस का बहुत ही महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है।

5.3.3 राममात्य द्वारा स्वरमेल कला निधि के स्वर

स्वरमेल कलानिधि ग्रन्थ 16वीं शताब्दी का ग्रंथ है। राममत्य जी ने शुद्ध और विकृत स्वर की संख्या को 14 माना है। आपने शुद्ध स्वर तो प्राचीन ग्रंथकारों की तरह स्थापित किए हैं परन्तु विकृत स्वर अलग है। जो इस तरह है :– पहली श्रुति पर कौषिक नी, दूसरी पर काकला नी, 3री पर च्युत नी, चौथी पर स, 7वीं पर रे, 9वीं पर ग, 10वीं पर साधारण ग, 11वं पर अंतर ग, 12वीं पर च्युत म, 13वीं पर म, 16वीं पर च्युत प, 17वीं पर प, 20वीं पर ध और 22वीं पर नी है।

5.3.4 श्री व्यंक्टमुखी चतुर्दन्डि प्रकाषिका के स्वर

श्री व्यंक्टमुखी दक्षिण भारत के शास्त्रकार थे। इन्होंने यह ग्रंथ 1640 से 1650 के बीच में लिखा। इन्होंने सात शुद्ध और पांच विकृत स्वरों को माना है। लेकिन विकृत स्वरों के इनके नाम अलग हैं। जो इस प्रकार हैं – 1) साधारण ग 2) अंतर ग 3) बराली म 4) कौषिक नी 5) काकली नी। इन्होंने भी अपने स्वर, संगीत रत्नाकर के आधार पर श्रुतियों पर स्थापित किए हैं।

शुद्ध स्वर

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
कौशिक नी		काकली नी		स			रे	ग	साधारण	अंतर ग			म	वराली म		प			ध		नी

5.3.5 श्री निवास कृत्य राग तत्व विबोध के स्वर

श्री निवास ने राग तत्व विबोध में सात शुद्ध और 5 विकृत कुल 12 स्वर माने हैं और वीणा के तार पर उनकी स्थापना की है। इन्होंने भी प्राचीन ग्रन्थकारों की ही तरह आपने शुद्ध स्वरों की स्थापना अंतिम श्रुति पर ही की है। श्री निवास के शुद्ध स्वर हमारे काफी ठाट के स्वर जैसे हैं। यह 18वीं शताब्दी का ग्रन्थ है। इन्होंने अपने विकृत स्वर व्येङक्टमुखी की तरह ही स्थापित किए हैं किन्तु वराली म को प्रति म कहा है।

इस तरह प्राचीन ग्रन्थकारों ने अपना श्रुति स्वर विभाजन किया है।

5.4 आधुनिक श्रुति स्वर विभाजन

आधुनिक काल का समय 19वीं शताब्दी से लेकर है। इस समय के दो ग्रंथ पंडित भातखण्डे जी के अभिनव राग मंजरी और लक्षय संगीत है जिसमें उन्होंने अपने 7 शुद्ध और 5 विकृत कुल 12 स्वर मान कर श्रुति स्वर विभाजन किया है और तार पर उनकी लम्बाई निकाल कर स्वर स्थापना की है। इन्होंने अपने बिलावल थाट के शुद्ध स्वरों को शुद्ध सप्तक माना है। इन्होंने भी प्राचीन ग्रन्थकारों की तरह स म प की चार–चार, रे ध की तीन–तीन और ग नी की दो–दो श्रुतियाँ मानी हैं। परन्तु उनकी स्थापना उसकी अंतिम श्रुति पर न

करके पहली श्रुति पर की है। उनकी श्रुति स्वर स्थापना इस प्रकार है और आजकल उतरी संगीत में यही प्रचलित है।

शुद्ध स्वर

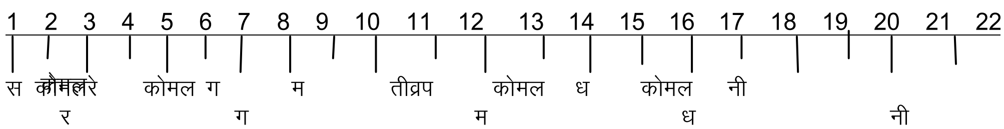

5.4.1 22 श्रुतियों के नाम

1) तीव्रा 2) कमुद्धती 3) मन्द्रा 4) छदोवती 5) दयावती 6) रजनी 7) रक्तिका 8) रोद्री 9) क्रोधी 10) वज्रिका 11) प्रसारणी 12) प्रीति 13) मार्जनी 14) क्षिति 15) रक्ता 16) संदीपनी 17) अलापनी 18) मदन्ती 19) रोहिणी 20) रम्या 21) उग्रा 22) क्षोभिणी।

5.5 तीनों कालों में श्रुति स्वर विभाजन में समता और विभिन्नता

समता

1) तीनों कालों के शास्त्रककारों ने स म प की 4–4, रे ध की 3–3 और ग नी की 2–2 श्रुतियां मानी हैं।
2) तीनों कालों में शुद्ध विकृत 12 स्वरों को श्रुतियों पर बाँटा गया है।
3) तीनों कालों में श्रुतियों की संख्या 22 मानी है।

विभिन्नता

1) प्राचीन और मध्यकालीन शास्त्रकारों ने अपने स्वर को अंतिम श्रुति पर स्थापित किया है परन्तु आधुनिक काल में स्वर को उसकी पहली श्रुति पर स्थापित किया है।
2) प्राचीन ग्रन्थकार प्रत्येक श्रुति के अंतर को समान मानते हैं परन्तु मध्य और आधुनिक इसको आसमान या बराबर नहीं मानते।

3) प्राचीन और मध्यकाल के ग नी स्वर आधुनिक काल के शुद्ध ग नी के बराबर स्थापित किए गए हैं। प्राचीन, मध्य काल के शुद्ध ग नी आजकल के कोमल ग नी के बराबर हैं।

4) प्राचीन और मध्यकाल में उनको स्वरों की अन्दोलन संख्या निकालने का पता नहीं था। परन्तु आधुनिक शास्त्रकारों ने 12 स्वरों की अन्दोलन संख्या को निकाला है।

5.6 सारांश

इस प्रकार श्रुति विभाजन को लेकर प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक के ग्रन्थकारों ने श्रुति विभाजन स्वर के सम्बन्ध में अपने–अपने विचार व्यक्त किये हैं जिसकी सहायता से हम इन श्रुति स्वर विभाजन का पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है

5.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 तीनों कालों में शुद्ध विकृत 12 स्वरों को श्रुतियों पर बाँटा गया है।

1 20 2 21 3 17 4 22 ऊ 4

2 प्राचीन और मध्यकालीन शास्त्रकारों ने अपने स्वर को कौ सी श्रुति पर स्थापित किया है

1 1 2 2 3 3 4 4 ऊ 4

3 श्रुति कितनी होती हैं।

1 18 2 22 3 13 4 21 ऊ 2

4 तीनों कालों के शास्त्रककारों ने स म प की कितनी श्रुतियां मानी हैं।

1 4 4 4 2 3 3 3 3 2 2 4 4 1 2 3 ऊ 1

5 सा की आन्दोलन संख्या कितनी है

1 240 2 243 3 259 4 233 ऊ 1

6 रे की आन्दोलन संख्या कितनी है

1 240 2 270 3 259 4 233 ऊ 2

5.8 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

1 श्रुति किसे कहते हैं।

2 भरत के द्वारा दिये गये श्रुति विभाजन को विस्तार से समझायें।

3 22 श्रुतियों पर 12 स्वरो की स्थपना को विस्तार से लिखें सभी विद्वानों के अनुसार।

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

नारद संगीत सरिता,
संगीत विषारद,प्रभुलाल वसंत
भारतीय संगीत का इतिहास, जयदेव

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 6**

Definition of the following :

निबद्धगान, अनिबद्धगान, रागालाप, रूपकालाप, स्वरस्थान, वागयकार, पंडित

6. प्रस्तावना

6.1 उद्धेश्य

6.1.1 निबद्ध गान के तीन नाम

6.1.2 निबद्ध गान के 'धातु' एवं 'अंग'

6.1.3 अंग

6.2 अनिबद्ध गान

6.2.1 रागालाप

6.2.2 रूपकालाप

6.2.3 आलप्ति

6.3 रागालाप

6.4 रूपकालाप

6.5 स्वरस्थान

6.6 वाग्गेयकार

6.6.1 गायक के गुण दोष

6.6.2 गायक के गुण

6.7 पंडित

6.8 सारांश

6.9 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

6.10 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

6.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

6. प्रस्तावना

प्राचीन समय में गायन के प्रकारों को दो भागों में विभाजित किया गया था एक ताल में बंधा हुआ एवं दसरू में ताल का प्रयोग नहीं होता जो गायन ताल में बंधा हुआ होता था उसे निबद्ध गान तथा ताल रहित गान को अनिबद्ध गान कहा जाता था। अनिबद्ध गान के अन्तर्गत रागालाप, रूपकालाप, स्वस्थान आते हैं इसी निबद्ध और अनिबद्ध गायन का विस्तारर्पक वर्णन इस अध्याय में किया जा रहा है।

6.1 उद्वेश्य

प्राचीन आलाप गायन का एक और प्रकार था जिसे रूपकालाप कहते थे। रूपकालाप में भी रागालाप की भांति राग के 10 राग लक्षणों को भली भाँति स्पष्ट रूप से दिखाया जाता था। इसके अतिरिक्त रूपकालाप में गायक को आलप के भिन्न–2 भाग 'प्रबन्ध' गायन के भागों (धातु) की भाँति अलग–अलग करके दिखाना पड़ता था। ऐसे भागों के अन्तिम स्वर को 'उपन्यास' कहते थे। इसी तरह अनेक प्रकार के आलाप की शास्त्रीय संगीत में प्रचलन है जिसका वर्णन इस अध्याय का मुख्य उद्वेश्स है।

निबद्ध गान

आलप्तिर्बन्धहीन त्वादनिबद्धमितीरिता।
संज्ञात्रयं निबद्धस्य प्रबंधोवस्तु रूपकम।।

'निबद्ध' एवं 'अनिबद्ध' दो प्रकार के गायन माने जाते हैं।

निबद्ध गान प्राचीन समय के वह गीत जो 'ताल' और स्वर में बंधे होते थे और जिनमें धातु और अंगों का समावेष था उन्हें निबद्ध गान कहते थे जैसे प्राचीन समय के प्रबन्ध, वस्तु, रूपक इत्यादि गायन। निबद्ध गान में भिन्न–भिन्न भाग या धातु जैसे उदग्राह, मेलापक, ध्रुव, अनारा और आभोग होते थे। आधुनिक निबद्ध गान ख्याल, ध्रुपद, ठुमरी, तराना इत्यादि हैं।

6.1 उद्देश्य

प्राचीन समय के संगीत में आलाप गायन के अनेक विस्तृत प्रकार प्रचार में थे। यानि रागालाप, रूपकालाप इत्यादि इन दोनों से भी आगे बढ़ी हुई प्राचीन आलाप गायन की एक और सीढ़ी थी लिसे 'आलप्ति' कहते थे आलप्ति में राग सम्पूर्ण रूप से प्रदर्षित किया जाता था। इसमें राग के 10 लक्षणों को स्पष्ट रूप से दिखाया जाता था तथा आलाप के भिन्न–भिन्न भाग 'प्रबन्ध' गायन के भागों की भाँति अलग–अलग करके दिखाया जाता था। इसके साथ ही आलप्ति में राग का 'आविर्भाव और 'तिरोभाव' भी दिखाया जाता था। इनकी अनेक विशेषताओं का वर्णन करना ही इस अध्याय का मुख्य उद्वंश्य है।

6.1.1 निबद्ध गान के तीन नाम

प्रबन्ध, वस्तु, रूपक

'संगीत रत्नाकर' के अनुसार निबद्ध गान के ये तीन नाम एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। अर्थात् इनमें केवल नामों का अन्तर है, अन्यथा समानार्थक शब्द है। किन्तु 'संगीत राज' नमक पुस्तक में इन तीनों में भेद बताया गया है। रूपक की विषेषता नाटकीय तत्वों पर प्रभाव डालना है। ये प्रबन्ध का भावात्मक पक्ष था। वस्तु नामक निबद्ध गान एक पूरा नाम माना जाता है तथा प्रबन्ध, वस्तु के छोटे–छोटे भागों में विभाजित था। यानि वस्तु के विभिन्न भाग मिलकर 'प्रबन्ध' कहलाते हैं। इस प्रकार ये तीनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। प्रबन्ध अपने आप में स्वतंत्र निबद्ध गान था।

6.1.2 निबद्ध गान के 'धातु' एवं 'अंग'

धातु यहाँ पर धातु का अर्थ प्रबन्ध, वस्तु, रूपक इत्यादि के अंगभूत भागों से है। धातु के चार प्रकार हैं।

1. **उदग्राह** ये धातु का पहला भाग है। निबद्ध गान के पहले भाग गो उदग्राह कहते हैं।
2. **मेलापक** दूसरी धातु मेलापक है। ये भाग (धातु) गान के पहले और तीसरे, भाग को जोड़ता है, इसलिये मेलापक कहलाता है।

3. **ध्रुव** ये भाग ध्रुव कहलाता है। क्योंकि ध्रुव तारे की भांति प्रत्येक निबद्ध गान में इसका होना अनिवार्य है। इसके बिना प्रबन्ध, वस्तु, रूपक कोई भी प्रकार का निबद्ध गान नहीं गाया जा सकता।

4. **आभोग** निबद्ध गान का यह भाग (धातु) गायन की समाप्ति का संकेत देता है।

5. **अन्तरा** ये पांचवी धातु कभी–कभी प्रबन्ध गान की सालगसूड़ रचनाओं में पाई जाती है।

6.1.3 अंग जिस प्रकार 'धातु' गान का शारीरिक भाग है, उसी प्रकार 'अंग' गान के भीतर का भाग है। ये गान के गुणों से सम्बन्ध रखता है।

अंग छः प्रकार के हैं

1. **स्वर** स्वर से अर्थ है संगीतोपयोगी स्वर।
2. **विरुद्‌म्** इसमें किन्हीं महान व्यक्तियों के गुणों का वर्णन होता है या रचनाकार का नाम होता है। ये पद का एक अंग है किन्तु विषेष गुणों के वर्णन से ये एक पृथक अंग माना गया है।
3. **पद** गान के साहित्यिक भाग पद कहलाता है।
4. **तेनक** ये अंग मंगलार्थ प्रकाषक है। बड़े–बड़े शुभ कार्यों में, हवन आदि कराने से पहले आरम्भ में ओम, तत्सत्, हरिओम तत्सत् या तत्वम्असि का जो प्रयोग होता है उसे तेनक कहते हैं। ये मंगलार्थ शब्द ब्रह्मा को संकेत करने के लिये कहे जाते हैं।
5. **पाट** ये अंग विषेषकर ताल वाद्य या अन्य वाद्यों के स्मृति सहायक शब्द होते हैं। जैसे निबद्ध गान में धि गि किट तक इत्यादि का प्रयोग।
6. **ताल** इस अंग से तात्पर्य है समय चक्र, जिसका प्रयोग हमारे संगीत में आज भी हो रहा है।

तीन प्रकार के प्रबन्ध मुख्यतः माने गए हैं।

द्विधातु दो धातु वाला।

त्रिधातु तीन धातु वाला।

चतुर्धातु चार धातु वाला।

6 अंगो वाले प्रबन्ध को मेदिनी कहा गया है।

5 अंगों वाले प्रबन्ध को आनन्दिनी कहा गया है।

4 अंगों वाले प्रबन्ध को दीपनी कहा गया है।

3 अंगों वाले प्रबन्ध को भावनी कहा गया है।

2 अंगों वाले प्रबन्ध को तारावली कहा गया है।

6.2 अनिबद्ध गान

प्राचीन समय का गायन जो ताल और स्वर में बंधा हुआ नहीं होता था, बल्कि गाते समय गायक की बुद्धिसामर्थ्य से स्वयं उत्पन्न होता है उसे 'अनिबद्ध गान' कहते थे। जैसे प्राचीन समय का आलप्ति गान या आलाप गायन।

प्राचीन समय का अनिबद्ध गान आलाप गायन या आलप्तिगायन के नाम से जाना जाता था। इस 'आलप्तिगायन' या आलाप गायन के तीन भेद थे जिन्हें 'रागालाप', 'रूपकालाप' और आलप्ति कहते थे।

6.2.1 रागालाप रागालाप की व्याख्या पं. शाङ्र्गदेव ने अपने ग्रन्थ 'संगीत–रत्नाकर' में निम्नलिखित रीति से की है

ग्रहांषमंद्रताराणां न्यासापन्यासयोस्तथा
अल्पत्वस्य बहुत्वस्य षाडवौडुवयोरपि।।
अभिव्यक्तिर्सत्र दृष्टा स रागालाप उच्यते।।

भावार्थ जिस गायन में राग सम्बन्धी दस लक्ष्णों यानि ग्रह, अंष, मन्द्र, तार, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, षाडवत्व और औडुवत्व इन दस लक्ष्णों को स्पष्ट रूप से प्रदर्षित किया जाता है उसे रागालाप कहते थे।

1. रागालाप में गायक को इन 10 राग लक्षणों को इसलिये स्पष्ट रूप से दिखलाना पड़ता था ताकि सुनने वालों को भली–भांति पता चल जाए कि कौन सा राग गाया जा रहा है वास्तव में रागालाप का उद्देष्य 10 राग लक्षणों को स्पष्ट रूप से दर्षाना था।

6.2.2 रूपकालाप प्राचीन आलाप गायन का एक और प्रकार था जिसे रूपकालाप कहते थे। रूपकालाप में भी रागालाप की भांति राग के 10 राग लक्षणों को भली भाँति स्पष्ट रूप से दिखाया जाता था। इसके अतिरिक्त रूपकालाप में गायक को आलप के भिन्न–2 भाग 'प्रबन्ध' गायन के भागों (धातु) की भाँति अलग–अलग करके दिखाना पड़ता था। ऐसे भागों के अन्तिम स्वर को 'उपन्यास' कहते थे।

रूपकालाप की परिभाषा 'संगीत रत्नाकर में इस प्रकार दी गई ह।

रूपकं तद्वदेव स्यात्पृथग्भूतविदारिकम्।

रूपकालाप, रागालाप से आलाप का एक बड़ा हुआ दर्जा था। रूपकालाप में शब्द यासनि गीत के बोल नहीं होते थे और ना ही ताल में बंधा होता था परन्तु रागालाप की अपेक्षा रूपकालाप अधिक विस्तृत रहता था। रूपकालाप के विषय में पं. भातखण्डे का कहना है कि ध्रुपद शैली के आलाप का विवरण प्राचीन समय के रूपकालाप से मिलता है।

6.2.3 आलप्ति प्राचीन समय के आलाप गायन का सबसे विस्तृत प्रकार 'आलप्ति' था। यानि रागालाप, रूपकालाप, इन दोनों से भी आगे बढ़ी हुई प्राचीन आलाप गायन की एक और सीढ़ी थी लिसे 'आलप्ति' कहते थे आलप्ति में राग सम्पूर्ण रूप से प्रदर्षित किया जाता था। इसमें राग के 10 लक्षणों को स्पष्ट रूप से दिखाया जाता था तथा आलाप के भिन्न–भिन्न भाग 'प्रबन्ध' गायन के भागों की भाँति अलग–अलग करके दिखाया जाता था। इसके साथ ही आलप्ति में राग का 'आविर्भाव और 'तिरोभाव' भी दिखाया जाता था। इसमें राग की हर प्रकार की सुन्दर बातें भी दिखाई जाती थीं। इस प्रकार रागालाप, रूपकालाप से भी अधिक विस्तृत था आलप्ति गान।

6.3 रागालाप

ग्रह, अंष, वादि तथा स्मवादि आदि का प्रयोग करते हुए राग की अभिव्यक्ति तीनों सप्तकों में करना रागालाप है। रागालाप ऐकाकार होता है इसमें उपन्यास स्वर पर रुका नहीं जाता रागालाप पुलिंग शब्द है। अर्भिवाव पुरुष का गुण है इसलिए रागालाप में रागा का तिरोभाव नहीं होता? रागालाप उसे कहते थे, जिसमें राग के दस लक्षणों अर्थात् ग्रह अंष न्यास

उपन्यास अल्पत्व बहुत्व षाडत्व औडत्व मन्द्र तथा तार का पालन करके आलाप किया जाता था पंडित शारंगदेव ने रागोलाप का स्थान ग्रामरागों में बताया है इनमें उपन्यास स्वरों पर रुका नहीं जाता तथा स्वरस्थान इनमें पालन भी नहीं किया जाता था।

6.4 रूपकालाप

संगीत रत्नाकर के अनुसार रागालाप के समान ही रूपकालाप होता है। अलग–अलग बिदारीयों वाला जिससे विवादी स्वर अलग हुए हों रागालाप कहलाता है। रागालाप करे समय उपन्यास स्वर पर विश्रांत किया जाने लगा त5ो आलाप का यह प्रकार रूपकालाप कहलायेगा। प्राचीन आलाप का दूसरा प्रकार स्पकालाव मानय था इसमें एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात ये थी कि इसें गायक को आलाप भिन्न–भिन्न खण्ड पृथक–पृथक ताल एवं लय में बद्ध करके प्रदर्षित करना पड़ता था। इन खण्डों को विदारी कहते थे यह पूरी प्रक्रिया लायबद्ध होती थी इस आलाप में अपन्यास स्वर पर विश्रांति करने क नियम था कलिनाथ के अनुसार उपन्यास स्वरों पर बिना रुके किये जाने वाला रागालाप होता है और उपन्यास स्वरों पर रुक कर करने पर रूपकालाप कहलाता है संगीत रत्नाकर के अनुसार इसके दो प्रकार हैं :

1. प्रतिग्रणिका 2. बंजनी।

6.5 स्वरस्थान

प्राचीन समय में आलाप करने के एक विषेष नियम को कहते थे "संगीत रत्नाकर" ग्रंथ में स्वरस्थानों का उल्लेख इस प्रकार मिलता है।

यत्रोपवेष्यते रागः स्वरे स्थायी स कथ्यते।
ततष्चतुर्थो द्रुयर्धः स्यात् स्वरे तस्मादधस्तने।।
चालनां मुखचालः स्यात् स्वस्थानं प्रथमं च तत्।
द्रुयर्धस्वरे चालयित्वा न्यसनं तद्द्वितीथकम्।।
स्थायिस्वरादष्टतस्तु दिगुणः परिकीर्तित।
दूयर्धदिगुणयोमध्ये स्थिता अर्धस्थितस्वराः।।
अर्धस्थिते चालयित्वा न्यसंन तु तृतीयकम्।

द्विगुणे चालयित्वा तु स्थायिन्यासाच्चतुथकम्।।
एभिष्यचतुर्भिः स्वरथानैः रागालप्तिर्मता सताम्।

उपरोक्त श्लोकों का भावार्थ यह है कि अंष स्वर पर ही समस्त राग निर्भर रहता है उसे ही स्थायी स्वर कहते हैं स्थायी स्वर से चौथा स्वर दुयर्ध कहलाता है। आठवां द्विगुन कहा जाता है तथ द्विगुण और दुयर्ध स्वरों के बीच में जो स्वर है वे अर्थस्थित स्वर माने जाएंगे प्रथम स्वरस्थान में गायक को अपना आलाप द्वयर्ध स्वर के नीचे रखना आवष्यक होता था इससे वह मन्द्र–सप्तक में इच्छानुसार विस्तार कर सकता था परन्तु न्यास स्थायी स्वर पर ही किया जाता था।

आलाप के तीसरे स्वरस्थान–नियम में आलाप का क्रम अर्द्धस्थित स्वरों में होता था परन्तु आलाप की समाप्ति सदैव स्थायी स्वर पर ही की जाती थी। आलाप के चौथे स्वरस्थान नियम में द्विगुण स्वर तथा उससे ऊपर के स्वर भी सम्मिलित कर लिये जाते थे परन्तु न्यास पुनः स्थसायी स्वर पर ही होता था इस प्रकार आलाप के चार स्वरस्थान नियम माने जाते थे प्रत्येक गायक को उपर्युक्त विधि से ही आसलाप–गायन में स्वरस्थान क्रमों के नियमों का पालन करना पड़ता था। मनमाने ढंग से ही, चाहे जिस स्थान से आलाप प्रारम्भ करके चाहे जहाँ न्यास करने की आज्ञा उस समय नहीं थी।

6.6 वाग्गेयकार

"षब्दानुषासनमभिधान प्रवीणता
छन्दः प्रभेदवेदित्यमलंकरेषु कौषलीम्
रस भाव परिान देष स्थितिषु चातुरो"

अर्थात् वाणी की रचना करके उसको गेय रूप देने वाला व्यक्ति, जिसको ंव्याकरण, छन्द, कोष, अलंकार, रस, भाव आदि की पूरी जानकारी हो, उसे वाग्गेयकार कहा जाता है। पं. भातखंडे जी के अनुसार "प्राचीन समय में जिन संगीत विद्वानों को पद–रचना, स्वर–रचना दोनों का ज्ञान होता था, उनको वाग्गेयकार की संज्ञा दी जाती थी।"

यह शब्द तीन शब्दों के मेल से बना है। वाक् का अर्थ है पद–रचना, गेय का अर्थ है गाया जाने वाला और कार का अर्थ है करने वाला अर्थात् वाणी की रचना करके उसको

गायन रूप देने वाले व्यक्ति को वाग्गेयकार कहा जाता है। पं. शारंगदेव, पं. दमोदर ने इसकी विषेषताओं का वर्णन करते समय मातु और धातु शब्द का प्रयोग किया है। दूसरे शब्दों में 'वाक्' अर्थात् पद–रचना को मातु और गीत पक्ष को धातु कहते हैं। चैतन्य देव 'एन इंट्रोडक्षन टू इण्डिन म्युज़िक' में इसके बारे इस प्रकार लिखते हैं।

"A Composer is known as vaggeyaikar. This word is derived from three othersvak (word) Geya (song), Kara (One who makes). As the term shows, a Composer must be a master of word and music if on the other hand, a person who writes only the literature of a song he is Matukara (matu workd of speech). If he provides the music to the given poem he is Dhatukara (Dhatu score musical part of song). But a vaggeyakara Composes both the poem and music, that is he creates a complete song." संगीत मकरंद में चौथे अध्याय के 21वें श्लोक से लेकर 47वें श्लोक तक वाग्गेयकार के गुणों का वर्णन किया गया है।

1. जो संगीत में निपुण हो।
2. जिसको संगीत के विभिन्न पक्षों की पूरी जानकारी हो।
3. जिसको देष की विभिन्न भाषाओं की जानकारी हो।
4. जिसको व्याकरण की पूरी जानकारी हो।
5. छन्द के भेदों को जानने वाला हो।
6. साहित्य में वर्णित विभिन्न अलंकारों, उपमाओं का ज्ञान हो।
7. विभिन्न रसों के लिए उचित शब्दावली का ज्ञान हो।
8. उचित लय और ताल के प्रयोग करने की पूरी जानकारी हो।
9. संगीत की विभिन्न काकू भेदों का ज्ञान हो।
10. जो बुद्धिमान और अपनी कला के द्वारा श्रोताओं को आकर्षित कर सके।
11. जिसको संगीत के पारिभाषिक तत्वों (सैद्धांतिक और क्रियात्मक) की पूर्ण जानकारी हो।
12. जिसकी स्मरण शक्ति तेज़ हो।
13. जिसको संगीत के परमपरागत पक्ष की पूर्ण जानकारी हो।
14. जो पढ़ा–लिखा हो।

प्राचीन शास्त्रों में तीन प्रकार के वाग्गेयकार का वर्णन मिलता है। उत्तम, मध्यम, निम्न (घटिया) जिस व्यक्ति में उपर्युक्त वर्णन किए गए सारे गुण हों, उसे उत्तम वाग्गेयकार कहा

जाता है। जो स्वर–रचना में तो निपुण हो परन्तु पद–रचना में पूर्ण जानकारी न रखता हो, उसे मध्यम वाग्गेयकार कहा जाता है। जिसको मातु (पद–रचना) गीत–रचना के उचित पक्ष की पूर्ण जानकारी न हो, उसे घटिया वाग्गेयकार कहा जाता है। संगीत में घटिया वाग्गेयकार का कोई स्थान नहीं है।

संगीत के शास्त्र में इनको नायक भी कहा जाता है। प्राचीन काल और मध्यकाल में वाग्गेयकारों के नाम बहुत मिल जाते हैं, जैसे हरीदास, तानसेन, नायक बक्ष, कौड़ी रंग, रंग बरस, तानसेन, अख्तर पिया, ललन पिया, कदर पिया आदि।

मध्यकालीन शास्त्रीय संगीत के वाग्गेयकार के अलावा भक्ति लहर के पीरों–फकीरों, गुरुओं को वाग्गेयकार कहा जा सकता है। डॉ. डी.एस. नरुला ने गुरू नानक देव जी को उत्तम वाग्गेयकार की उपाधि दी है। परन्तु इन वाग्गेयकार को शास्त्रीय संगीत की श्रेणी में रखना उचित नहीं है क्योंकि इन्होंने अपनी वाणियों के प्रचार के लिए संगीत क केवल सहारा ही लिया है। मध्यकाल के इस श्रेणी के वाग्गेयकारों के नाम इस तरह हैं गुरू नानक देव जी, कबीर जी, सूरदास, मीराबाई, जासो बाई, सहिजो बाई, मलूक दास , परमानंद आदि। जिस तरह भक्ति काल का कवि खुद संगीतकार भी था, उवस तरह आज का कवि नहीं है। आज का कवि अपनी रचना में सांगीतिक पक्ष का ध्यान तो जरूर रखता है परन्तु यह जरूरी नीं कि वह उसकी धुन को भावना के अनुकूल बना सके। संगीत को स्वर देने वालों के क्षेत्र भिन्न बन गए हैं। जिसको स्वरकार, संगीत निर्देषक, संगीतकार आदि कहा जाता है। इन कारणों से ही वर्तमान काल में शास्त्रीय वाग्गेयकारों की बहुत कमी है। इसका मुख्य कारण यह है कि पिछले लगभग 200 सालों से अर्थात् जब से संगीत की बागडोर ज्यादातर अनपढ़ लोगों के हाथ में रही, उन्हें शास्त्रीय संगीत के क्रियात्मक पक्ष के बारे में बहुत जानकारी होती है परन्तु व्याकरण भाषा छन्द, अलंकार आदि का पूर्ण ज्ञान नहीं होता जिसके फलस्वरूप वह कवि औ संगीत का सुमेल करने में असमर्थ हो गए। ऐसे संगीतकार अपनी रचनाओं में ज्यादातर साधारण शब्दावली का ही प्रयोग करते हैं। पिछले लगभग 50 सालों से कुछ पढ़े–लिखे संगीतकारों ने संगीत और कवि क उत्तम मेल करके अपनी रचनाएं रचीं। इन संगीतकारों को उत्तम वाग्गेयकार की श्रेणी में रखा जा सकता है। उनमें से प्रमुख वाग्गेयकारों

का नाम इस तरह हैं पं. ओंकार नाथ ठाकुर, फैयाज खां, आचार्य ब्रह्मपति, पं. भोला नाथ भट्ट, उस्तार अमीर खां आदि।

ख्याल जैजावंती (रचना फैयाज खां)

मोरे अन्दर अब लौ नहीं आए,
कौन सी चूक भई मोसे आली।
प्रेम पिया से अखियां तरस गईं,
कित सौतन बिलमाए।

राग अहीर भैरव (रचना अमीर खां)

पीया परबीन व परम सुख चतुर
मोहिनी मूरत नट सागर।
रोम–रोम जा बरनी न जाए मोसे,
ऐसे श्याम चतुर गुण आगर।

इन वाग्गेयकारों के अलावा कुछ पढ़े–लिखे विद्वान् संगीतकार स्वर और शब्द दोनों की इकट्ठी रचना कर रहे है। परन्तु उनकी रचनाओं को अभी प्रमाणता नहीं मिली। परन्तु जल्दी ही निकटवर्ती भविष्य में उनके उत्तम वाग्गेयकार की श्रेणी में मिल जाएगी।

6.6.1 गायक के गुण दोष

संगीत की परम्परा भारत में बहुत प्राचीन है। अगर यह कहा जाए कि संगीत उतना ही पुरातन है जितनी मनुष्य जाति तो यह गलत नहीं। मनुष्य जब असभ्य था, जब उसे ठीक भाषा का भी ज्ञान नहीं था, तब भी उसने अपनी अन्दर की भावनाओं को अलग–अलग ढंगों द्वारा प्रकट किया होगा। प्रेम, वीरता, क्रोध, भय आदि जैसी भावनाओं को प्रकट करते समय उसकी आवाज़ों में सम्भावित तौर पर अंतर आया होगा। इन आवाज़ों के उतार–चढ़ाव को बाद में संगीत के क्षेत्र में स्वरों का नामकरण दिया गया। संगीत का माध्यम अति–सूक्ष्म है। संगीत का मूल आधार स्वर और लय है। इनके आधार पर मनुष्य जब आनंद की प्राप्ति करता है तो कलाकार कहलाता है। कलाकार के अपनी कला संबंधी तीन मुख्य उद्देष्य होते हैं।

1. अपनी कला द्वारा रोजी का साधन
2. कला संबंधी अपने ज्ञान को आगे बांटना
3. कला में पूर्ण सिद्धि करके अपनी इच्छा की पूर्ति करना

कला की साधना के साथ आनंद प्राप्त करना ब्रह्मानंद को प्राप्त करना है। रस और आनंद एक–दूसरे के पर्यायवाची शब्द हैं। संगीत में साधना के लिए समय, करता, स्थान, अभ्यास, उचित सांगीतिक षिक्षा, आत्म–विश्वास आदि के गुणों का होना जरूरी है, तब ही वह अपनी कला द्वारा इच्छी की पूर्ति कर सकेगा। जबकि कलाकार अपनी कला द्वारा रस की उत्पत्ति करता है तो उसकी कला को उत्तम कला कहा जाता है। उस उत्तम कला के लिए जो ढंग, विधियों, शैलियों आदि का प्रयोग करता है, उसके उसके गुण कहा जाता है।

संगीत के पुरातन ग्रंथकारों ने गायन के 10 गुणों का वर्णन किया है। जैसे रक्त, पूर्व, अलंकृत, प्रसन्न, व्यक्त, विकृष्ट, श्लक्ष्ण, सम, सुकुमार, मधुर। इसका वर्णन शारंगदेव ने अपने ग्रंथ संगीत रत्नाकर में किया है। यह चाहे गीत के गुण हैं क्योंकि इसको पेष तो गायक को ही करना होता है इसलिए इनको गायक के गुण में ही रखा जा सकता है।

6.6.2 गायक के गुण

1. सुरीली आवाज़

जिसकी आवाज़ सुरीली हे। वसे तो आवाज़ का सुरीलापन एक स्वाभाविक गुण होता है। गायकों के दिमाग में स्वाभाविक तौर से सुरीलेपन की एक आषा बन जाती है। जिसके आधार पर वह सच्चा सुर लगाते हैं और इसके आधार पर वह तीनों सप्तकों के स्वरों को आसानी से बोल जाते हैं। परन्तु जिन गायकों की आवाज में यह दैवी गुण स्वाभाविक नहीं होता वह इसे अभ्यास द्वारा प्राप्त करते हैं।

2. शुद्ध उच्चारण

गीत के शब्दों का उच्चारण करते समय और गीत को विभिन्न सांगीतिक पक्षों द्वारा प्रकट करते समय उसके बोल या शब्दों का उच्चारण शुद्ध और स्पष्ट होना चाहिए।

3. स्वर का उचित लगाव

सांगीतिक रचना को पेष करते समय उसमें लगने वाले स्वरों का उचित स्थान क्या है, उसका किस तरह प्रयोग किया जाना चाहिए, उत्तम गायक के लिए इसकी जानकारी बहुत जरूरी है।

4. लय और ताल पर अधिकार

गायक को अपनी रचना के अनुकूल उचित लय और ताल की पूर्ण जानकारी होनी बहुत जरूरी है। क्योंकि छंद के अनुकूल ताल, ताल के अनुकूल उचित लय के प्रयोग द्वारा ही गायक अपनी कला द्वारा रस की अनुभूति करा सकता है।

5. राग का पूर्ण ज्ञान

गायक जो भी राग प्रस्तुत करने जा रहा है, इसके बारे में गायक को पूरी जानकारी होनी चाहिए। पूर्ण ज्ञान होने से ही वह अल्पत्व, बहुत्व, तिरोभाव, अविर्भाव और स्वरों का उचित लगाव आदि सांगीतिक क्रियाओं को उचित ढंग से प्रस्तुत कर सकता है।

6. गायन शैली की परम्परागत जानकारी

राग को जिस शैली द्वारा पेष किया जा रहा है, इसके बारे में गायक को पूरी जानकारी होनी चाहिए। जैसे ध्रुपद के लिए जोरदार और खुली आवाज़ विभिन्न लयकारी का प्रयोग, आला की विषेष रीति, गमक, मींड का प्रयोग, ख्याल के लिए आलाप, तान, बोलतान, खटका, मुर्की, सरगम आदि विभिन्न अलंकारों का प्रयोग, ठुमरी में राग के स्वरों का क्रमानुसार प्रयोग, चंचलता, कोमलता, शृंगारिता के भाव को विभिन्न प्रकार की सांगीतिक क्रियाएं, खटका, मुर्की, मींड का विषेष प्रयोग होता है। उचित प्रयोग न होने पर सुरीलेपन की कमी रह जाती है। आवाज़ को गायक न तो नाक द्वारा और न ही दबा कर पेष करे। अभ्यास इतना होना चाहिए कि तान आलाप आदि गाते समय उसका शुद्ध रूप स्वाभाविक तौर पर ही प्रकट कर सके।

7. संगीत के विभिन्न आलंकारिक तत्त्वों की जानकारी

गायक को संगीत के विभिन्न आलंकारिक तत्त्वो जैसे मींड, गमक, खटका, मुर्की आदि का उचित प्रयोग और जानकारी होनी बहुत जरूरी है। क्योंकि इन तत्त्वों द्वारा ही राग की सजावट हो सकती है।

8. आत्म–विष्वास

किसी भी काम में सफलता के लिए आत्म–विश्वास का होना बहुत जरूरी है। संगीत में भय, घबराहट दूर करने के लिए यह जरूी है कि गायक में आत्म–विश्वास की भावना हो, तब ही वह अपनी गायकी को उत्तम बना सकता है।

9. भाव रस

भाव से अर्थ है मनुष्य की अंदरूनी भावनाएँ। यह भाव जब परिपक्व हो जाते हैं तो रस की उत्पत्ति होती है। भाव दो तरह के होते हैं – स्थाई भाव और अस्थाई भाव। स्थाई भाव ही रस की उत्पत्ति करते हैं। गायक जिस भाव से कंठ द्वारा स्वरों को उच्चारता है, उसी तरह का प्रभाव श्रोताओं के मन पर पड़ता है। रस और भाव का अटूट सम्बन्ध है। संगीतकार को अपनी मनःस्थिति से ही भाव उत्पन्न करने का अभ्यास होना चाहिए।

10. मंच–प्रदर्षन के साथ संबंधित उचित तत्त्वों की जानकारी

गायक सुरीला हो। उचित सांगीतिक षिक्षा रखता हो। उचित समय पर कौन–कौन सी क्रिया कौन से शारीरिक अंग के साथ करनी है, इसका ज्ञान होना जरूरी है। जैसे – सम दिखाने के लिए सिर को झुकाना और दूसरी क्रियाओं को पेष करते समय मुंह पर उन्हीं भावनाओं का प्रदर्षन होना चाहिए जो उसकी बंदिष की शब्दावली में हो। अगर यह खुद किसी वाद्य का प्रयोग कर रहा है, जैसे – तानपुरा, हारमोनियम, सुरमंडल आदि तो उसको बजाने की विधि ठीक प्रकार से ज्ञात होनी चाहिए।

11. स्वर–ज्ञान

गायक के लिए स्वर का ज्ञान होना बहुत जरूरी है। क्योंकि अगर स्वर–ज्ञान नहीं होगा तो वह राग का स्पष्टीकरण नहीं कर सकता और न ही वह अपने गायन के साथ प्रयोग होने वाले वाद्यों को सुर कर सकेगा।

12. गुरू–षिष्य–परम्परा

अच्छा गायक कलाकार तब ही बन सकता है जब उसने गुरू से उचित षिक्षा ली हो क्योंकि संगीत एक आदर्ष कला है। इस कला को लेखनी द्वारा बन्ध नहीं किया जा सकता। इसलिए यह जरूरी है कि यह कला केवल गुरू–षिष्य–परम्परा द्वारा सीखी जाए। क्योंकि संगीत की बारिकियों को केवल गुरू द्वारा ही सीखा जा सकता है।

गायक के दोष

1. बेसुरापन

जहां गायक सुरीली आवाज़ द्वारा श्रोताओं को आकर्षित कर लेता है, वहां गाते समय अगर वह थोड़ा–सा बेसुरा हो जाता है तो उसके गायन का प्रभाव खत्म हो जाता है, अर्थात् बेसुरापन से भाव उस आवाज़ से है, जब उचित स्वर का प्रयोग उचित स्थान पर न किया जाए।

2. अषुद्ध उच्चारण

जब गायक अपनी रचना पेष करते समय गीत में प्रयोग की शब्दावली का ठीक उच्चारण न करे तो यह गायक का दोष माना जाएगा। क्योंकि चाहे शास्त्रीय संगीत स्वर प्रधान हैं परन्तु शब्दावली का शुद्ध होना भी बहुत जरूरी है। क्योंकि अगर बंदिष की शब्दावली शुद्ध नहीं होगी तो उसका पूरा प्रभाव श्रोताओं पर नहीं पड़ेगा।

3. राग का अपूर्ण ज्ञान

अगर गायक का अपनी राग, जिसको पेष करने जा रहा है, का पूर्ण ज्ञान नहीं होगा तो यह उसका दोष माना जाएगा क्योंकि राग के पूर्ण ज्ञान के बिना वह अपनी कला को प्रस्तुत करने में असफल होगा।

4. पुनरावृत्ति दोष

जब गायक गाते समय प्रयोग किए गए स्वर समूहों को बार–बार दोहराता रहे या एक ही क्रिया का प्रयोग बार–बार कर तो उसको पुनरावृत्ति दोष कहा जाता है। यह दोष गायक में उस समय ही पाया जाता है जब इसके पास पर्याप्त मात्रा में विषेष सांगीतिक शैली की परम्परा के अनुकूल सामग्री न हो।

5. आत्म–विश्वास की कमी

आत्म–विश्वास की कमी से जब आवाज़ का संतुलन बिगड़ जाता है तो गायक के चेहरे पर तरह–तरह के डर के भाव आने शुरू हो जाते हैं, जिससे वह अपनी कला की सुन्दरता खो बैठता है।

6. मुद्रा दोष

गाते समय मुंह बनाने, कान पर हाथ रखकर गाना, आँखे बंद रख करके गाना, दांत पीस कर गाना, कंधों को ऊंचा करक गाना या सिर हिलाकर गाना या गला फुलाकर गाना आदि मुद्रा दोष माने जाते हैं।

7. कंठ दोष

नाक में गाना, आवाज को दबाकर गाना, गला फुलाकर गाना, कम्पित आवाज़ में गाना आदि कंठ दोष माने जाते हैं। गायक के पास चाहे सामग्री की कोई कमी न हो परन्तु कंठ दोषों के कारण वह उच्चकोटि का कलाकार नहीं बन सकता।

8. लय और ताल की अज्ञानता

जब गायक कलाकार अपनी कला पेष करते समय बेताल हो जाते हैं या उचित समय पर उचित लयकारी प्रयोग करने में असमर्थ हो जाते हैं तो यह उनका एक बहुत बड़ा दोष माना जाता है।

9. **अनुचित स्वर लगाव–** स्वर तो मुख्य रूप से शुद्ध और विकृत 12 माने जाते हैं परन्तु विशेष राग में स्वर लगाव का अलग–अलग ढंग होता है। जिससे उस राग का स्पष्टीकरण

होता है। अगर गायक विशेष राग के स्वरों का सही लगाव नहीं लगाएगा तो यह गायक का बहुत बड़ा दोष माना जाएगा। उदाहरण के लिए भैरव और कलिंगड़ा दोनों रागों में रे ध कोमल लगते हैं परन्तु दोनों के रे ध में बहुत अन्तर है।

10. अभ्यास की कमी– अभ्यास का संगीत में विशेष महत्त्व होता है। इसके बारे में इस तरह कहा गया है कि जब कलाकार एक दिन अभ्यास नहीं करता तो उसकी वह कमी अपने आप महसूस होती है। अगर दो दिन नहीं करता तो उसका ज्ञान संगीत के विशेषज्ञ को हो जाती है। अगर तीन दिन नहीं करता तो उसका ज्ञान साधारण लोगों को हो जाता है। इस तरह संगीत में अभ्यास का विशेष महत्त्व है। अभ्यास की कमी भी कलाकार का दोष माना जाता है।

11. नीरस गाना – कलाकार का मुख्य उद्देश्य अपने मनोभाव को प्रकट करना होता है। यह भाव ही श्रोताओं को आनंद का अनुभव कराता है। आनंद से भाव रस से ही माना जाता है अगर कलाकार अपनी कला प्रस्तुत करते समय उचित सांगीतिक शैली, उचित सांगतिक ताल, लय, शब्दावली आदि का प्रयोग नहीं करता तो वह इस रस को अनुभव नहीं करा सकता। इसलिए अगर गायक इन तत्त्वों का ध्यान नहीं रखेगा तो उसका गायन नीरस माना जाएगा।

12. आलंकारिक तत्त्वों की अज्ञानता

गयक अगर सांगीतिक आलंकारिक तत्त्वों जैसे – मींड, गमक, खटका आदि का प्रयोग उचित ढंग से नहीं करता तो यह भी उसके दोष माने जाते हैं क्योंकि इन क्रियाओं से राग में सुन्दरता की उत्पत्ति होती है।

6.7 पंडित

जो पंडित व्यक्ति कला में साधारण तथा संगीत शास्त्र में असाधारण हो अर्थात् जिसे संगीतशास्त्र का विशेष ज्ञान हो पंडित कहलाता है।

6.8 सारांश

प्राचीन गायन विधाओं का ज्ञान प्राप्त किये बिना हम यह नहीं कह सकते कि हम पूर्णतः संगीत का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं इसलिए इनका अपना एक विषेष महत्त्व है।

6.9 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 प्राचीन समय का गायन जो ताल और स्वर में बंधा हुआ नहीं होता था। उसे क्या कहते हैं

1 अनिबद्ध गान 2 गान 3 संगीत 4 निबद्व गान ऊ 1

2 रूपकालाप में भी रागालाप की भांति राग के कितने लक्षणों को भली भाँति स्पष्ट रूप से दिखाया जाता था।

1 10 2 11 3 12 4 14 ऊ 1

3 वाग्गेयकार के कितने प्रकार है।

1 3 2 4 3 5 4 6 ऊ 1

6.10 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

रागालाप को विस्तार से लिखें।
स्वर स्थान के उपर एक निबन्द लिखें।
वाग्यकार और पंडित किसे कहते हैं।
निबन्द्ध और अनिबन्द्ध गान में कया अन्तर है।
रूपकालाप किसे कहते है।

6.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

संगीत रत्नावली ,अशोक कुमार यमन
संगीत विषारद, प्रभुलाल वसंत
संगीत शास्त्र दर्षण, हरीशचन्द्र श्रीवास्तव

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 7**

भारतीय संगीत का इतिहास प्राचीनकाल, मध्य काल तथा आधुनिक काल तक

7.1-: प्रस्तावना

7.2 उद्धेश्य

7.3 संगीत का इतिहास पूर्व मध्यकाल

7.4 उत्तर मध्यकाल

7.5 आधुनिक काल

7.6 सारांश

7.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

7.6 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.1 प्रस्तावना

भारतीय संगीत के इतिहास को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते है प्राचीनकाल, मध्य काल तथा आधुनिक काल। इस अध्याय में हमने भारतीय संगीत के इतिहास को प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक बताया है। इस अध्याय में संगीत के इतिहास को जानेंगें।

7.2 उद्धेश्य

भारतीय शास्त्रीय संगीत के इतिहास का अध्ययन करने से विधार्थी को संगीत की उन्नति किस काल में कितनी हुई और संगीत के रागों का तथा स्वरों का कया स्वरूप रहा

होगा इन ग्रन्थों द्वारा भली प्रकार से समझाा जा सकता है। इस अध्याय से यह सम्पूर्ण जानकारी हमें प्राप्त होती है।

7.3 संगीत का इतिहास :–

संगीत के संपूर्ण इतिहास–काल से आज तक के समय को तीन भागों में विभाजित किया गया है –

1. प्राचीन काल – आदि काल से 800 ई० तक।
2. मध्य काल – 800 ई० से 1800 ई० तक।
3. आधुनिक काल – 1800 ई० से आज तक।

यहाँ हम मध्य काल के संगीत पर प्रकाश डाल रहे हैं। मध्य काल को पुनः दो भागों में विभक्त किया जा सकता है –

7.3. पूर्व मध्यकाल

7.4. उत्तर मध्यकाल

पूर्व मध्यकाल :– यह काल 8वीं शताब्दी से 13वीं शताब्दी तक माना जाता है। इस काल की शारङ्देव कृत्य 'संगीत रत्नाकर' और पंडित जयदेव कृत 'गीत गोविन्द' यह ज्ञात होता है कि उस समय प्रबन्ध गायन प्रचलित था, इसलिए इस काल को प्रबन्ध काल भी कहते हैं। 9वीं शताब्दी से 11वीं शताब्दी तक भारत में सगीत की अच्छी उन्नति हुई। 11वीं शताब्दी से मुसलमानों का आक्रमण आरम्भ हुआ और लगभग 12वीं शताब्दी तक वे भारत के शासक हो गए। उनकी सभ्यता संस्कृति और संगीत का प्रभाव भारतीय संगीत पर पड़ा। अतः उत्तरी संगीत धीरे–धीरे दक्षिणी संगीत से पृथक् हो गया। इस काल में कई संगीत के ग्रन्थ प्राप्त हुए।

संगीत मकरन्द :–

इस ग्रन्थ के रचयिता नारद हैं। इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम स्त्री, पुरुष, नपुंसक रागों का

वर्णन मिला। महर्षि नारद ने कई ग्रन्थ लिखे। जैसे – नारदीय शिक्षा, नारदीय संहिता आदि। संगीत मकरन्द ग्रन्थ को विद्वानों द्वारा 9वीं शताब्दी का माना गया।

गीत गोविन्द :–

इस काल में संगीत मकरन्द ग्रन्थ के बाद गीत गोविन्द की रचना हुई। यह ग्रन्थ 12वीं शताब्दी में जयदेव द्वारा लिखा गया। जयदेव कवि ही नहीं गायक भी थे। इसमें स्वरलिपि सहित संस्कृत में लिखे गए प्रबन्ध और गीतों का संग्रह है।

संगीत रत्नाकर :–

शारङ्देव द्वारा रचित 'संगीत रत्नाकर' ग्रन्थ 13वीं शताब्दी में प्राप्त हुआ। इसे दक्षिणी संगीत का भी आधार ग्रन्थ माना जाता है। शारङ्देव ने (1) संवादी स्वर का अन्तर 6 अथवा 12 श्रुतियों का माना है, जबकि उनके पूर्व भरत, दत्तिल और मतंग ने 9 अथवा 13वीं श्रुतियों का अन्तर माना है। भरत के समान 18 जातियाँ मानी गई हैं। जाति के 13 लक्षण और समस्त रागों को दस भागों में बाँटा गया है, जिसे 'दस विधि राग वर्गीकरण' कहा गया। जातियों से ग्राम राग और ग्राम राग से राग और उपराग उत्पन्न माने गए हैं। ग्राम रागों की संख्या 30 मानी गयी। यह संगीत का अति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ माना गया है।

7.4 उत्तर मध्यकाल :–

इस काल का प्रारम्भ 13वीं शताब्दी के बाद 18वीं शताब्दी तक माना जाता है। इस काल में फारस और उत्तर भारतीय संगीत का मिश्रित रूप भलीभाँति विकसित हुआ। अतः इसे विकाल काल भी कहा जाने लगा। अधिकांश मुसलमान राजाओं को संगीत से प्रेम था। अतः उन लोगों ने अपने दरबार में संगीतज्ञों को आश्रय दिया।

अलाउद्दीन (1296 से 1316 तक) :–

अलाउद्दीन के शासनकाल में अमीर खुसरो नामक संगीत विद्वान हुए। कहा जाता है कि उन्होंने वाद्यों में तबला और सितार, रागों में राजगिरि, सरपरदा, जिलफ आदि गीत के प्रकारों में छोटा ख्याल और तराना तथा तालों में झमूरा, सूल आड़ा चारताल आदि का आविष्कार किया। उनकी गायन प्रतियोगिता दक्षिण के संगीतज्ञ गोपाल नायक से हुई।

छल–कपट से इन्होंने गोपाल नायक को हराया (ऐसा कहा गया है)।

राग तरंगिणी :–

इस काल की सर्वप्रथम प्रस्तुत पुस्तक लोचनकृत 'राग–तरंगिणी' है। इसका रचनाकाल 15वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध माना जाता है। इसके अनुसार शुद्ध थाट काफी है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि सम्पूर्ण रागों को कुल 12 थाटों अथवा मेलों में विभाजित किया गया। आधुनिक थाट राग वर्गीकरण का बीजारोपण राग तरंगिणी द्वारा हुआ, ऐसा लोगों का विचार है।

कल्लिनाथ :–

कल्लिनाथ एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ था। राग वर्गीकरण का एक मत इन्हीं के नाम पर आधारित है। उनके समय में भक्ति आन्दोलन चल पड़ा जिससे भजन–कीर्तन द्वारा संगीत का खूब प्रचार हुआ।

अकबर (1556–1604) :–

अकबर के शासनकाल में संगीत की बहुत उन्नति हुई। अकबर स्वयं बड़ा संगीत प्रेमी था। उन्होंने अकबरी के अनुसार उसके दरबार में छत्तीस संगीतज्ञ थे, जैसे नायक बैजू, ताल–तरंग, गोपाल, तानसेन आदि। इनमें तानसेन मुख्य थे। तानसेन की वंश और शिष्य परम्परा सैनी घराना कहलायी। तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई आदि भक्त कवियों और कवियित्रियों के द्वारा जनता में संगीत का प्रचार बढ़ा।

जहाँगीर (1605–1627) :–

जहाँगीर के दरबार में भी कई संगीतज्ञ थे। सन् 1620 में दक्षिण के पंडित सोमनाथ ने राग विबोध पुस्तक लिखी। सन् 1625 में पंडित दामोदर मिश्र ने 'संगीत दर्पण' ग्रन्थ लिखे।

शाहजहाँ (1627–1657) :–

शाहजहाँ के दरबारी संगीतज्ञों के नाम निम्नलिखित हैं – दिरंग खाँ, ताल खाँ और

तानसेन के दामाद विलास खाँ और तानसेन के पुत्र लाल खाँ।

संगीत परिजात :–

संगीत परिजात ग्रन्थ 1650 ई० में पंडित अहोबल द्वारा लिखा गया और दीनानाथ ने बाद में इसका अनुवाद किया। (क) पंडित अहोबल ने 7 शुद्ध स्वरों के साथ–साथ 22 विकृत स्वरों के नाम तो दिए हैं, किन्तु राग अध्याय में केवल 12 स्वर प्रयोग किए हैं, उन्होंने कुछ स्वरों के लिए एक से अधिक नाम प्रयोग किए हैं। (ख) इस ग्रन्थ में पहली बार वीणा के तार पर 12 स्वरों की स्थापना का प्रयास किया गया है। (ग) संगीत परिजात का शुद्ध सप्तक उत्तर भारत के काफी और दक्षिण भारत के खरहरप्रिया थाट के समान है।

औरंगजेब (1657–1670) :–

औरंगजेब संगीत का कट्टर विरोधी था। जिन लोगों ने सम्राट् के भय से संगीत छोड़ दिया, उन्हें राज्य की ओर से पेंशन दी गई। इस काल में संगीत के कुछ ग्रन्थों की रचना हुई, जो इस प्रकार हैं –

चतुर्दन्डिप्रकाशिका :–

यह 1660 ई० दक्षिण के संगीतज्ञ व्यंकटमखी द्वारा लिखा गया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि उस समय के सप्तक से अधिक–से–अधिक 72 थाटों की रचना हो सकती है तथा एक थाट से कुल 484 राग उत्पन्न हो सकते हैं।

भावभट्ट –

भावभट्ट ने तीन ग्रन्थ लिखे – अनूप संगीत रत्नाकर, अनूप और बिलास तथा अनुपांकुश।

मोहम्मद शाह रंगीले (1719–1748) :–

यह मुगल वंश का अन्तिम बादशाह तथा संगीत का बड़ा प्रेमी था। उनके दरबार में सदारंग और अदारंग दो प्रमुख गायक थे, जिनके ख्याल आज भी प्रचुरता से प्रचलित हैं। लगभग इसी समय शोरी मियाँ ने टप्पे का आविष्कार किया। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुसलमानों का राज्य धीरे–धीरे समाप्त होने लगा और अंग्रेजों का प्रभुत्व बढ़ने लगा। केवल

रियासतों में संगीत की साधना चलती रही।

7.5. आधुनिक काल :—

आधुनिक काल का आरम्भ अंग्रेजों के आगमन से होता है। आधुनिक काल को पुनः दो भागों में बांटा जा सकता है :

1 ब्रिटिश काल या स्वतंत्रता से पूर्व काल

2 स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से अभी तक का समय।

ब्रिटिशकाल में संगीत :—

ब्रिटिश काल 1850 से 1947 ई० तक का है। इस काल के आरम्भ में संगीत पतन की ओर अग्रसर हो रहा था। अंग्रेज भारतीय संगीत को अच्छी दृष्टि से नहीं देखते थे, उस समय संगीत केवल कुछ देशी रियासतों में चल रहा था। संगीत सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ भी इस काल में लिखे गए।

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में श्रीनिवास ने 'राग—तत्त्व विबोध' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में उन्होंने पं० अहोबल की भाँति वीणा के तार की लम्बाई पर भिन्न—भिन्न नापों से 12 स्वरों की स्थापना की। उन्होंने अपना शुद्ध थाट अहोबल की तरह आजकल के काफी थाट के समान रखा। दक्षिण में तंजौर के मराठा महाराजा राजा तुलाजी राव भोंसले ने (1763—1784) कर्नाटकी संगीत पद्धति पर दो पुस्तकें— संगीत 'सारामृतम्' तथा 'राग लक्षणम्' लिखीं। इसमें दक्षिणी संगीत का वर्णन है। इसी काल में मुहम्मद रजा ने 'नगमाते आसफी' लिखी।

जिस समय उत्तर भारत में रागों की उत्पत्ति के नये विचार फैल रहे थे, उस समय तंजौर दक्षिणी संगीत का मुख्य केन्द्र था। इस समय दक्षिणी संगीत के प्रसिद्ध विद्वान् त्यागराज, श्याम शास्त्री, सुबराज दीक्षित आदि हुए। बंगाल के सर सुरेन्द्रमोहन टैगोर ने उत्तर भारत की थाट—राग पद्धति को गलत माना और उसके स्थान में अपनी पुस्तक 'युनिवर्सल हिस्ट्री ऑफ म्युज़िक' में प्राचीन राग—रागिनी पद्धति को फिर से अपनाया। बंगाल के और अन्य विद्वानों ने भी इस पद्धति को माना, परन्तु आगे चलकर यह पद्धति स्वीकार नहीं की गयी।

यह समय संगीत का प्रचार–काल था। सरकार से प्रोत्साहन न मिलने के कारण इस कला की अवनति हो रही थी। परन्तु समय के उपरान्त भी देशी रियासतें जैसे – ग्वालियर, बड़ौदा, जयपुर, रामपुर, पटियाला आदि में संगीत को आश्रय मिला था। कुछ बड़े–बड़े नगरों में भी संगीत की साधना कुछ खानदानी संगीतज्ञ कर रहे थे। इन नगरों में दिल्ली, बनारस, लखनऊ, बम्बई आदि प्रमुख थे। लखनऊ के वाजिद अली शाह के दरबार में संगीत का बड़ा प्रचार हुआ। परन्तु इस समय संगीत में श्रृंगारिक भावना की प्रधानता हो रही थी। संगीतज्ञों ने अपने अलग–अलग घराने बनाना शुरु किया। गायन के प्रमुख घराने जैसे – ग्वालियर, किराना, दिल्ली, पटियाला, आगरा आदि हुए। वादन में प्रत्येक वाद्य के अलग–अलग घराने बने। जैसे – तबला के दिल्ली, पंजाब, बनारस, लखनऊ, अजराड़ा आदि। इसी प्रकार सितार में लखनऊ के गुलाम रजा ने रजाखानी गत चलायी, मसीत खाँ ने मसीतखानी गत चलायी।

अंग्रेजों के अत्याधिक प्रभाव के कारण रियासतों में पनपने वाला संगीत भी आश्रयहीन हो गया था। संगीत की पवित्रता क्षीण हो चुकी थी, यह मात्र भोग–विलास की वस्तु हो गया था, जिससे हिंदू समाज के कुलीन घरों के लोग भी संगीत को हेय दृष्टि से देखने लगे थे। जबकि घरानों में संगीत उन्नति कर रहा था।

संगीत के इस प्रचार–काल में दो महापुरुष जिन्होंने संगीत का उद्धार किया, इस क्षेत्र में आये। ये दो महापुरुष स्वर्गीय पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर तथा स्वर्गीय पं० विष्णु नारायण भातखण्डे थे। आजकल के संगीत का सारा श्रेय इन्हीं दोनों प्राप्त है। अपने अथक परिश्रम में दोनों ने गायन तथा संगीत शास्त्र को नव जीवन–रस प्रदान किया।

विष्णु नारायण भातखण्डे :–

इस काल में पंडित भातखण्डे हुए, जिन्होंने भारतीय संगीत को एक नई दिशा दी। इन्होंने थाट राग वर्गीकरण पद्धति बनाई। एक नई स्वरलिपि पद्धति बनाई। 'क्रमिक पुस्तक कालिका' 6 भागों में तथा अन्य संगीत पुस्तकें लिखीं। कई संगीत विद्यालय खोले और संगीत को एक विषय के रूप में स्थापित किया। संगीत को जनसाधारण में प्रचारित किया।

विष्णु दिगम्बर पुलस्कर :–

लगभग इसी समय में पंडित विष्णु दिगम्बर पुलस्कर जी भी हुए, जिन्होंने संगीत के क्षेत्र में बहुत कार्य किया। इन्होंने 1901 में लाहौर में और फिर बम्बई में गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना की। इन्होंने गीतों में भक्ति तथा राष्ट्रीय चेतना को प्रमुखता से लिया। इन्होंने भी स्वरलिपि पद्धति का निर्माण किया। पंडित जी ने लगभग 50 पुस्तकें भी लिखीं।

दोनों महापुरुषों ने देश के बड़े–बड़े शहरों में संगीत के जलसे तथा संगीत–सम्मेलन किये। पण्डित भातखण्डे ने सबसे पहला संगीत सम्मेलन (Music Conference) बड़ौदा में किया, जिसका उद्घाटन बड़ौदा नरेश ने स्वयं किया था। दोनों के परिश्रम से आज देश में अनेक संगीत विद्यालय चल रहे हैं जिनमें से प्रमुख हैं – (1) म्युज़िक कालेज, कलकत्ता (2) स्कूल आफ इण्डियन म्युजिक, बम्बई (3) गान्धर्व महाविद्यालय, पूना (4) व्यास संगीत विद्यालय, बम्बई (5) गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल, बम्बई (6) भातखण्डे संगीत, समिति, विद्यापीठ (मैरिस कालेज) लखनऊ (7) प्रयाग संगीत समिति, इलाहाबाद (8) माधव संगीत विद्यालय, ग्वालियर (9) स्कूल आफ इण्डियन म्युज़िक, बड़ौदा (10) गांधी संगीत विद्यालय, कानपुर। इन विद्यालयों में से कुछ विद्यालय संगीत की उपाधियाँ (Degree) भी देते हैं। जैसे – लखनऊ की 'संगीत विद्यालय' प्रयाग संगीत समिति की 'संगीत प्रभाकर,' ग्वालियर की 'संगीत रत्न', बम्बई तथा पूना की 'संगीत विशारद' तथा 'संगीत प्रवीण' आदि।

पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर (1872–1931) – पण्डित जी ने संगीत की साधना करके सारे देश में भ्रमण किया और जनता का मन संगीत की ओर आकृष्ट किया। उन्होंने 'गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल' की स्थापना की। पण्डित जी ने एक स्वतन्त्र स्वर लेखन पद्धति (Notation System) निकाली तथा छोटी–बड़ी कुल लगभग 50 पुस्तकें लिखीं। इन पुस्तकों में मुख्य ये हैं – संगीत बाल प्रकाश (भाग 1–3), संगीत बाल बोध (भाग 1–5), भारतीय संगीत लेखन पद्धति, महिला संगीत (भाग 1–2), बालोदय संगीत, संगीत, संगीत तत्त्वदर्शक, राग प्रवेश (भाग 1–19) नारदीय शिक्षा इत्यादि।

पं० विष्णु नारायण भातखण्डे (1960–1936)– पण्डित जी ने बी०ए०एल०एल०बी० तक उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। उन्होंने भारत के बड़े–बड़े नगरों व रियासतों का भ्रमण किया तथा

अनेक विद्वानों से संगीत की अनेक चीज़ें प्राप्त की जिनका संग्रह उन्होंने 'क्रमिक पुस्तका मालिका' के 6 भागों में किया है। पण्डित जी ने एक सरल तथा वैज्ञानिक स्वर लेखन पद्धति बनायी तथा संगीत की अनेक पुस्तकें अंग्रेजी, संस्कृत, हिन्दी तथा मराठी भाषाओं में लिखीं। पण्डित जी ने ग्वालियर, बड़ौदा तथा लखनऊ में संगीत के विद्यालय खोले, जो आज भी संगीत का प्रचार कर रहे हैं। उनकी प्राप्त पुस्तकों में से मुख्य इस प्रकार हैं – (1) हिन्दुस्तानी संगीत क्रमिक पुस्तक मालिका 6 भागों में (अनेक प्रचलित तथा अप्रचलित रागों की चीजें) स्वर–लिपि सहित दी गयी हैं, (2) स्वर–मालिका (गुजराती), (3) अभिनव राग मंजरी (संस्कृत), (4) लक्ष्य संगीत (संस्कृत), (5) हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति 4 भागों में (मराठी में सम्पूर्ण संगीत शास्त्र) इत्यादि। पण्डित जी ने आधुनिक रागों का वर्गीकरण केवल 10 थाटों में किया है।

स्वतंत्र भारत में संगीत :–

1947 में भारत की स्वतंत्रता के बाद संगीत को नई दिशा मिली। संगीत के प्रोत्साहन के लिए 1952 में 'राष्ट्रपति पदक' शुरु किया गया। 1953 में 'संगीत नाटक अकादमी' तथा 1954 में 'ललित कला अकादमी' की स्थापना हुई। आधुनिक संगीत पर बहुत–कुछ प्रभाव रवीन्द्र संगीत (भाव–संगीत) का पड़ा है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अनेक सुन्दर गीतों को भिन्न–भिन्न रागिनियों में बाँधा। पाश्चात्य संगीत का प्रभाव भी अपने संगीत पर पड़ा, परन्तु अपना शास्त्रीय संगीत इन सब प्रभावों से अछूता ही रहा। पाश्चात्य संगीत का स्पष्ट प्रभाव फिल्मी संगीत पर पड़ा। आजकल संगीत के प्रचार में फिल्म तथा रेडियो ने अमूल्य योगदान प्रदान किया है। यह ठीक है कि फिल्मी संगीत के कारण भारत के शास्त्रीय संगीत को बहुत हानि पहुँची है, पर प्रचार की दृष्टि से फिल्मी संगीत ने ही इस कला को घर–घर पहुँचाया है। इस प्रकार रेडियो ने संगीत के प्रचार के लिए जो सहायता की है वह सराहनीय है। रेडियो द्वारा शास्त्रीय संगीत को साधारण मनुष्य तक पहुँचाया गया है। भारत के शास्त्रीय संगीत के उत्थान के लिए भारत सरकार के पूर्व सूचना मन्त्री डॉ०बी०बी० केसकर जी ने प्रयत्न किये हैं जो अत्यन्त सराहनीय है। आपके परिश्रम से ही आज रेडियो संगीत का स्तर ऊँचा हो जा रहा है। रेडियो के साथ ही आजकल फिल्मी संगीत का झुकाव भी शास्त्रीय संगीत की ओर हो रहा है।

देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात् सरकार का ध्यान भी अब अपनी इस प्राचीन कला की ओर केन्द्रित हुआ है। भारत सरकार ने इस कला को प्रोत्साहन देने के लिए प्रत्येक वर्ष देश के चुने हुए संगीतज्ञों को पुरस्कार देना निश्चित किया है। आज देश के प्रत्येक छोटे–बड़े नगर में संगीत के केन्द्र खुल गये हैं। सबसे महान् कार्य यह हुआ कि संगीत को अन्य विषयों की तरह एक पाठ्य विषय मान लिया गया है। इण्टरमीडिएट तक तथा इनके अतिरिक्त कुछ विश्वविद्यालयों (Universities) ने इसे बी०ए० तक पाठ्य विषय रखा है। इन विश्वविद्यालयों के नाम प्रयाग, बनारस, आगरा, पटना, नागपुर, कश्मीर तथा पंजाब हैं। आजकल प्रत्येक बड़े नगर में हर वर्ष संगीत–सम्मेलन होते हैं जिससे जनता की रुचि दिन–प्रतिदिन शास्त्रीय संगीत पर केन्द्रित हो रही है।

'स्वर–लिपि' के आविष्कार से संगीत को बहुत लाभ हुआ है। इसके द्वारा संगीत की पुरानी–से–पुरानी चीजों (गीतों) को उसी रूप में कई सदियों तक रखा जा सकता है। अनेक विद्वानों ने संगीत के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक विषयों पर पुस्तकें लिखी हैं। इसके अतिरिक्त अब संगीत एक विषय के रूप में पढ़ाया जाने लगा है। अनेक पुस्तकें, रेडियो, टी०वी०, Computer, Internet, संगीत सम्मेलन, संगीत प्रतियोगिताएँ आदि संगीत के विकास में सहायक सिद्ध हुए हैं। इन सब कारणों से आधुनिक समय में संगीत का प्रचार देश भर में खूब हो रहा है।

7.6. सारांश :-

भारतीय संगीत को अध्ययन की दृष्टि से तीन भागों में बाँटा गया है। प्राचीन काल में संगीत, मध्यकाल में संगीत तथा आधुनिक काल में संगीत। मध्यकाल तथा आधुनिक काल में संगीत के अध्ययन से हम कह सकते हैं कि अनेक उतार चढ़ावों के बीच भारतीय संगीत ने स्वयं को स्थापित किया। प्रत्येक देश के मध्ययुग इतिहास की अपनी विशिष्ट प्रवृत्तियाँ होती हैं। इस समय भारत में कुछ खास विशेषताएँ थीं। जिनका प्रभाव भारतीय संस्कृति तथा संगीत पर पड़ा। संघर्ष के क्षणों में भी कला फलती फूलती रही।

आधुनिक काल में विभिन्न भाषाओं में अनेक ग्रन्थों की रचना हुई। इन ग्रन्थों पर भारतीय संगीत का भवन खड़ा हुआ है। समीक्षा की दृष्टि से ये ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण हैं। शिक्षकों

एवं विद्यार्थियों के दिशा निर्देशन एवं उनके शिक्षण–क्रम में ग्रन्थों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, जिनसें हमें संगीत सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है तथा हमें यह जानने में आसानी होती है कि बीचे हुए समय में संगीत का स्वरूप कैसा था।

7.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 भारतीय संगीत के इतिहास को हम तीन भागों में विभाजित कर सकते है

1 2 2 4 3 6 4 3 ऊ 4

2 कौनसा काल भारतीय संगीत का स्वर्ण युग कहा गया है

1 प्राचीन काल 2 मध्यकवल 3 आधुनिककाल 4 पूर्वकाल ऊ 2

3 'संगीत नाटक अकादमी' की स्थापना कब हुई।

1 1953 2 1965 3 1972 4 1988 ऊ 1

4 1954 में 'ललित कला अकादमी' की स्थापना हुई।

1 1953 2 1954 3 1972 4 1988 ऊ 2

5 संगीत के प्रोत्साहन के लिए 'राष्ट्रपति पदक' कब शुरु किया गया।

1 1952 2 1954 3 1972 4 1988 ऊ 2

6 पंडित विष्णु दिगम्बर पुलस्कर जी ने कौन से विद्यालय की स्थापना की।

1 गांधर्व महाविद्यालय 2 संगीत विद्यालय 3 संगीत नाट्क अकादमी 4 मैरिश म्यूजिक कालेज ऊ 1

7 लाहौर में गांधर्व महाविद्यालय की स्थापना कब की।

1 1901 2 1902 3 1904 4 1900 ऊ 1

8 इन्होंने भी स्वरलिपि पद्धति का निर्माण किया उसका नाम क्या है।

1 वि. दि. पुलस्कर स्वर लिपि 2 वि. नारायण. भातखण्डे स्वर लिपि ऊ 1

7.8. परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

1. मध्यकाल में संगीत की स्थिति के बारे में लिखें।
2. कौनसा काल भारतीय संगीत का स्वर्ण युग कहा गया है विस्तार से चर्चा करें।
3. मध्य काल के कलाकाराके के बारे में लिखें जिन्होने संगीत का प्रचार किसर।
4. संगीत ग्रन्थों की चर्चा करे जिनकी रचना मध्य काल में हुई।
5. वर्तमान समय में संगीत की स्थिति की चर्चा करे।
6. मध्यकाल से लेकर वर्तमान समय तक संगीत की स्थिति की चर्चा करें।

7.9. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. संगीत शास्त्र दर्पण, हरीशचन्द्र श्रीवास्नव

4. भारतीय संगीत का इतिहास, जयदेव

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 8**

गमक और उसके प्रकार

8-1 प्रस्तावना

8.2 उद्धेश्य

8.3 गमक की परिभाषा

8.4 विशेषता

8.5 गमक के प्रकार

8-6 सारांश

8.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

8.8 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

8.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.1 प्रस्तावना

गीत में गीत है और गीत में जीवन का चिन्ह। यही कारण है कि जीवन और गीत की धाराएँ अनादिकाल से चली आ रही हैं।

प्राचीन काल से भारतीय शास्त्री संगीत अपने नियमों का पालन करता हुआ आगे को बढ़ रहा है। इसमें गायन की अनेक विधाएँ अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं जिसमें ख्याल गायन में गमक जो गायन में गंभीरता लाने के लिये किया जाता है। जिसका उल्लेख हम नीचे करने जा रहे हैं।

8.2 उद्धेश्य

इस अध्याय का मुख्य उद्धेश्य गमक की परिभाषा को समझाते हुए इसके 15 प्रकारो की चर्चा करना है। जिससे विद्यार्थी को गमक के बारे मे सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सके।

8,3 परिभाषा :— स्वरस्य कंपो गमकः श्रोतृचित्तसुखावहः।

यस्य भेदास्तु तिरिपः स्फुरितः कंपितस्तथा ।।

स्परों का ऐसा कम्पन जो सुनने वाले के चित को सुखदाई हो, गमक कहलाता हैं

8,4 विशेषता

गमक का उदगम संस्कृत धातु गम से हुआ है। अर्थात जिसका अर्थ है चलना भारतीय संगीत की खोज करने वाले सौंदर्य विज्ञान के विद्वानों ने गमक को सर्वाधिक महत्व दिया है। उनके मतानुसार भारतीय संगीत में सौदर्य भावुकता रंजकता और आर्कषण उत्पन्न करने का कारण ही गमक है। जब स्वर को विषिट प्रकार से हिलाया जाता है तो उसे गमक कहते है। आज हिन्दुस्तानी संगीत पद्वति में जो साधारण रूप में लिया जाता है कि हृदय में वछित प्रकार की श्वसन क्रिया का उसके द्वारा विषिट प्रकार के कम्पन पैदा कर स्वर उच्चचाण किया जाए। उसे गमक कहते है।

8.5 गमक के प्रकार :

गमक के पन्द्रह भेद हैं —

1 तिरिप

2 स्फुरित

3 कंपित

4 लीन

5 आंदोलित

6 वलित

7 त्रिभिन्न

8 कुरूल

9 आहत

10 उल्लासित

11 प्लावित

12 हुम्पित

13 मुद्रित

14 नामित

15 मिश्रित

दक्षिण संगीत के ग्रन्थों में गमको के निम्नलिखित दस प्रकार मिलते हैः–

1 आरोह, 2 अवरोह 3 ढालु 4 स्फुरित 5 कंपित 6 आहत 7 प्रत्याहत 8 त्रिपुछ 9 आन्दोलित 10 मूर्च्छना।

प्राचीन समय में स्वरों में एक विशेष प्रकार के कंपन को गमक कहते थे। उस केपन को प्रकट करने के लिये जो विभिन्न ढ्रंग प्रचार में थे, उन्ही का उल्लेख उपर के श्लोकों मे किया गया है। वर्तमान समय में गमकों का प्रयोग प्राचीन ढंग से नही होता, तब भी किसी न किसी रूप में गमक का प्रयोग हमारे वाद्य संगीत और कंठ संगीत में होता अवश्य है। खटका मुर्की जमजमा मीड सूत कंपन गिटकरी इत्यादि सब गमक की ही श्रेणी में ही आ जाते है।

आधुनिक संगीतज्ञ गमक की परिभाषा इस प्रकार करते है–जब ह्रदय से जोर लगाकर गंभीरता पूर्वक कुछ कंपन के साथ स्वरों का प्रयोग किया जाता है, तो उसे गमक कीते है। गमक का प्रयोग अधिकतर ध्रुवपद में होता है, किंतु वर्तमान में ख्याल गायन में भी गमक की ताने लेते है। नोम् ताम् में आलाप में भी अतिम भाग द्रुत लय का आता है, तो गमकयुक्त ताने ली जाती है।

मक के पंद्रह भेदों का रूपष्टीकरण निम्न प्रकार से है::–

तिरिप : इसे आजकल हिल्लोल भी कहते है। इसमें स्वर को वेग से कंपित किया जाता है। यह कंपन 1/8 मात्रा का होता हैं।

जैसे सा ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ

स्फुरित गमक : इसे आजकल गिटकरी कहते है। इसमें कंपन का काल 1/6 मात्रा का होता है।

कंपित : इसे आजकल खटका कहते हैं। इसमें 1/4 मात्रा काल में कंपन होता है।

लीन : जब कोई स्वर आधी मात्रा के काल में किसी आगे या पीछे के स्वर में लीन हो जाये तो उसे लीन गमक कीते है।

आंदोलित : एक मात्रा के काल में कंपन करने को आंदोलित गमक कहते है।

प्लापित : जब स्वर को तीन चौथाई काल में आंदोलित किया जाये तो, उसे प्लापित गमक कहते है।

वली : इसे आतकल मीड़ कीते है।

कुरूल : इसे आतकल घसीट कहते है।

मुद्रित : जब मुहं बंद करके गमक ली जाए तो उसे मुद्रित गमक कहते है।

गुम्फित : जब हृदय मे हुंकार की ध्वनि से गमक उत्पन्न की जाती है, तो उसे गुम्फित गमक कहते है।

त्रिभिन्न : जब तीन स्थानों को छूकर चौथे पर पहुँचा जाये तो उसे त़्रिभिन्न गमक कहते है।

आहत : संचार करते समय जब किसी स्वर से अगले स्वर को छूकर मूल स्वर पर लौट जाये तो उसे आहत गमक कीते है।

उल्लासित : जब स्वर एक क्रम से शीघरता से आरोह क्रम से गाए या बजाए जाएँ तो उसे उल्लासित गमक कहते है।

नामित : जब स्वर मीड़ की भाँति चलकर अपने स्थान से नीचा हो जाए तो उसे नामित गमक कहते है।

8.6 सारांशः— इस अध्याय से हमें गमक के बारे मे ज्ञान प्राप्त होता है और इसके साथ साथ गमक के सभी प्रकारों के बारे में ज्ञान प्राप्त होता हैं और इसके अतिरिक्त वर्तमान समय में इनको ंकिस रूप में प्रयोग किया जाता है इसकी भी जानकारी प्राप्त होती है।

8.7 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1 गमक के कितने प्रकार की वयाख्या मिलती है ।

1 10 2 12 3 14 4 15 ऊ 4

2 गमक में कितने स्वरों को आन्दोलित करते हैं ।

1 1 2 2 3 3 4 4 ऊ 1

3 जब स्वर एक क्रम से शीघरता से आरोह क्रम से गाए या बजाए जाएँ तो उसे उल्लासित गमक कहते है।

1 उल्लासित 2 कंपित 3 हुंफित 4 नामित ऊ 1

4 जब स्वर को तीन चौथाई काल में आंदोलित किया जाये तो, उसे प्लापित गमक कहते है।

1 उल्लरसित 2 प्लापित 3 हुंफित 4 नामित ऊ 2

5 जब स्वर मीड़ की भाँति चलकर अपने स्थान से नीचा हो जाए तो उसे नामित गमक कहते है।

1 उल्लासित 2 कंपित 3 हुंफित 4 नामित ऊ 4

8.8 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

1 गमक के पंद्रह प्रकारों की वयाख्या लिखें ।

2 वर्तमान में गमक के कितने प्रकार प्रयोग किये जाते है।

3 गमक की परिभाषा लिखें।

4 गमक के प्रकारों की विस्तार से चर्चा करें।

8.9 संदर्भ ग्रन्थ

1 संगीत विशारद, प्रभूलाल गर्ग

2 संगीताजली, पंडित ओमकारनाथ ठाकुर

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 9**

जीवन परिचय

9-1 **प्रस्तावना**

9.2 **उद्देश्य**

9.3 **उस्ताद अमीर खाँ**

9.4 **उस्ताद अल्लाउदीन खाँ**

9.5 **सारांश**

9-6 **लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न**

9.7 **परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न**

9.8 **सन्दर्भ ग्रन्थ**

9.1 :- प्रस्तावना

इस अध्याय में विधार्थी उन संगीत कलाकारों के जीवन का अध्ययन करेगें जो विशेष कला के धनी है जिन्होने सम्पूर्ण जीवन संगीत की सेवा की है।

9.2 उद्देश्य

संगीत कलाकारों के जीवन परिचय को पढने के उपरान्त विधार्थी को कलाकारों के संगीत जगत में इस स्थान को प्राप्त करने के लिये कितना कठोर परिश्रम है इसका ज्ञान होगा। इन्ही कलाकारों के कारण ही आज हमारा भारतीय संगीत पूरे विश्व में अपना विशेष स्थान रखता है।

9.3. "उस्ताद अमीर खाँ" :–

उस्ताद अमीर खाँ 20वीं शताब्दी के महान् गायकों की श्रेणी में आते हैं। वह न केवल अपने युग के अनेक गायकों–वादकों के आदर्श और प्रेरणा स्रोत रहे हैं बल्कि 21वीं सदी के अनेक कलाकार भी उन्हीं के पदचिन्हों पर चलकर संगीत–शिखर को स्पर्श करने का प्रयास कर रहे हैं।

. जन्म :–

इन्दौर के दरबारी कलावंत उस्ताद शाहमीर खाँ के सुपुत्र अमीर खाँ का जन्म 15 अगस्त, 1912 में अकोला, इन्दौर में हुआ।

शिक्षा :–

उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता शाहमीर खाँ से ली, जो इन्दौर दरबार में वीणा तथा सारंगी के विख्यात कलाकार थे। उस समय इन्दौर में उच्चकोटि के कलाकार रहते थे। उनके घर पर अलाबंदे ज़ाफरूद्दीन खाँ, बिन्दू खाँ, मुराद खाँ आदि ऐसे संगीतज्ञ अक्सर आया करते थे और संगीत की चर्चा हुआ करती थी। उस समय यद्यपि अमीर खाँ बहुत छोटे थे, किन्तु उन पर उस वातावरण का प्रभाव पड़ता ही था। हर शुक्रवार को उनके यहाँ संगीत का एक अच्छा जलसा हुआ करता था। इस संगीतिक वातावरण का अमिट प्रभाव अमीर खाँ पर पड़ा।

शाहमीर खाँ ने प्रारम्भ में अमीर खाँ को सारंगी बजाना सिखाया और कुछ दिनों तक वे सारंगी बजाते रहे। सारंगी छोड़ने और गायन शुरु करने के पीछे एक विशेष घटना है जो इस प्रकार है – शाहमीर के शिष्यों में एक शिष्य बहुत घमण्डी हो गया था। उसके लिए उनके पिता ने एक युक्ति निकाली। अमीर खाँ को गायन सिखाना शुरु किया और विभिन्न प्रकार के कठिन पलटे सिखाकर उनके कण्ठ में बैठा दिया। इस बात को शाहमीर खाँ ने बड़ा गुप्त रखा। 2–3 वर्षों के बाद एक जलसे में उसी शिष्य ने सारंगी का प्रदर्शन दिया। इसी के बाद खाँ साहब ने अमीर खाँ को गायन के लिए बैठा दिया और उससे संगति करने को कहा। वह झट तैयार हो गया। 11–12 साल के छोटे बच्चे को रंगमंच पर देखकर जनता ने करतल ध्वनि की। अमीर खाँ ने गायन शुरु किया। जब वे कठिन सरगम लेने लगे तो उसका हाथ रुक गया और वह पसीने–पसीने हो गया। उपस्थित श्रोताओं ने भी उनके सुरीले और मधुर

शैली की बहुत प्रशंसा की। उस दिन से अमीर खाँ ने सारंगी बजाना हमेशा के लिए छोड़ दिया और गायन का अभ्यास करने लगे। शाहमीर खाँ ने अमीर खाँ के गले में मेरूदण्ड की तानें अच्छी प्रकार बैठा दी थी।

इन्दौर के बाद वे 5–6 वर्षों के लिए बम्बई आ गये। वहाँ एक महफ़िल में उनकी मुलाकात अब्दुल वहीद खाँ से हुई। अमीर खाँ का गायन सुनकर उन्होंने दबे मन से उसकी प्रशंसा की और कहा अच्छा गाते हो, किन्तु अभी भी तुमको मेहनत करनी चाहिये। उनकी ये बातें अमीर खाँ को अच्छी नहीं लगी। उन्होंने अब्दुल वहीद खाँ की ही गायकी पर अभ्यास करने और उनसे हार्दिक प्रशंसा लेने का दृढ़ संकल्प किया। कुछ दिनों के बाद उन्होंने अपनी इच्छा पूरी भी की। अब्दुल वहीद खाँ को यह कहना ही पड़ा कि मुझे अब पूर्ण विश्वास हो गया है कि मेरे घराने की गायकी को अमीर खाँ ही जिन्दा रखेंगे। इसके बाद आप दिल्ली चले गए।

दिल्ली में कुछ दिनों तक रहने के बाद एक बंगाली सज्जन के साथ कलकत्ता चले गये। वहाँ लोगों ने आपका गायन बहुत पसन्द किया। अमीर खाँ ने अपना पहला आकाशवाणी कार्यक्रम कलकत्ता से प्रसारित किया। तब से आप देश के प्रत्येक आकाशवाणी केन्द्र से अपना कार्यक्रम प्रसारित करते रहे और सभी उच्च संगीत सम्मेलनों में आमन्त्रित किये जाते रहे। लगभग 6 वर्षों तक कलकत्ता में रहने के बाद बम्बई में स्थायी रूप से रहने लगे।

अपने पिता के संरक्षण में 25 साल की उम्र तक आपने संगीत शिक्षा पाई। उस्ताद उमान अली खाँ से भी उन्होंने सीखा था, जो उनके पिता के उस्ताद थे। उस्ताद रजब अली खाँ और उस्ताद अब्दुल वहीद खाँ की गायकी से भी उन्होंने बहुत कुछ ग्रहण किया था। लेकिन इन बड़े गायकों से सीखने के बावजूद भी किसी एक परम्परा से चिपके हुए नहीं थे, बल्कि नए रास्तों के निर्माता थे। वे समय–समय पर अपनी गायकी में नए प्रयोग भी करते रहे।

कृतित्व :–

अमीर खाँ साहब की मान्यता थी कि ख्याल में काव्य तत्त्व उतना ही महत्त्व का है जितना कि राग (स्वर–समीष्ठ) तत्त्व का। अच्छा संगीतज्ञ बनने के लिए कलाकार में काव्य की कल्पनाशीलता होनी चाहिए। खाँ साहब का गायन अति विलम्बित ख्याल गायन का प्रतीक था, जिसे उन्होंने बड़े चिन्तन–मनन से विकसित किया। उन्होंने गीत भी लिखे, इन्होंने एक नया

राग बनाया – चन्द्रमधु, और सबसे बड़ी बात यह है कि एक नई गायन शैली की नींव डालकर इन्दौर घराना नामक एक नए घराने की स्थापना भी की।

गुण :– उस्ताद अमीर खाँ घनघोर परिश्रम, अटूट लगन तथा दृढ़ आत्म विश्वास के कारण शीघ्र ही भारतीय संगीताकाश के प्रखर नक्षत्र बन गए। उस्ताद जी की गायकी बड़ी चैनदार थी। जैसा उनका स्वभाव शान्त और गम्भीर था वैसी ही उनकी गायन शैली थी। वह शनैः शनैः बड़ी चैनदारी के साथ राग विस्तार करते तथा राग में खो जाया करते थे। अमीर खाँ की गायन शैली अथाह सागर सी गम्भीर होते हुए भी मधुर थी। स्वरों का लगाव खाँ साहब की अपनी मौलिकता थी। उनके कण्ठ का माधुर्य, सधी हुई स्वरलहरी सन्तुलित जमजमे तान और मींड की मिठास तथा रागों की शुद्धता उनकी कला मर्मज्ञता और लालित्य की अनूठी विशेषताएँ थीं। गायन के अभ्यास को वे पूजा समझते थे। वे दिन में तीन बार अभ्यास करते थे। खाँ साहब की आलाप में स्वरों की बढ़त एक विशेष प्रकार की थी, जिसे 'मेरुदण्ड पद्धति' कहते हैं। इस पद्धति में गणित के अनुसार स्वरों का उलट फेर किया जाता है, इसलिए आलाप की बढ़त में दरबारी कानड़ा अथवा मियां मल्हार ऐसे रागों में अमीर खाँ को मध्य सप्तक में पंचम तक पहुंचने में ही काफी समय लग जाता था। इसलिए उनका गायन साधारण श्रोता के योग्य नहीं रहा। उन्हें विलम्बित झूमरा ताल बहुत पसन्द था। गायन के साथ लड़ंत–भिड़ंत तनिक पसन्द नहीं था। वे सीधा–सीधा लय ठेका ही पसन्द करते थे। खाँ साहब न ठुमरी गाते और न किसी दूसरे प्रकार के हल्के गीत ही गाना पसन्द करते थे। कभी–कभी तराना ही गा लेते थे। उन्हें विलम्बित ख्याल बहुत प्रिय था। रागों में मुलतानी, भटियार, मारवा, तोड़ी और सुधराई बहुत पसन्द थी। उनके आलाप में अब्दुल वहीद खाँ के गायन का, मुराद खाँ वहीद खाँ के बीन का और तानों में रज्जब अली खाँ का प्रभाव दिखाई पड़ता था।

धीर, गम्भीर, मर्यादामय एवं सुव्यवस्थित उनका गायन था, जिसमें आनन्द था, तल्लीनता थी, समाधि की स्थिति की ओर अग्रसर होने का भाव था। मेरूदण्ड प्रणाली के वे निष्ठावान अनुयायी थे। निश्चय ही अमीर खाँ एक उच्चकोटि के कण्ठसिद्ध गायक थे और गायक के अलावा भी बहुत कुछ थे। आधुनिक युग के अनेक गायकों पर उस्ताद अमीर खाँ के प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है।

फिल्मी सफ़र :–

फिल्मी क्षेत्र में भी अमीर खाँ ने अपनी कला का सौरभ फैलाया और जनसाधारण ने उनके शास्त्रीय संगीत में उतनी ही रुचि ली, जितनी की अन्य गीतों में। उस्ताद अमीर खाँ ने पंडित डी० वी० पलुस्कर के साथ फिल्प ''बैजू बावरा'' में पार्श्व गायन भी किया, किन्तु मंच पर वे अपने प्रिय शास्त्रीय रागों (दरबारी, भारवा, अड़ाना, मेघ, देशी आदि) की ही प्रस्तुति करते रहे।

शिष्य :– उस्ताद अमीर खाँ के कई शिष्य हैं, जिनमें स्वर्गीय पंडित अमरनाथ, पंडित तेजपाल एवं पंडित सुरेन्द्र सिंह (सिंह बंधु), प्रो० अजित सिंह पेन्तल, प्रो० रविन्द्र बिष्ट एंव कंकना बैनर्जी उल्लेखनीय हैं। आपके प्रमुख शिष्यों में अमरनाथ का नाम उल्लेखनीय है। अमरनाथ की गायकी सुनकर सहज ही अमीर खाँ की याद आने लगती है। अमरनाथ आकाशवाणी दिल्ली पर नियुक्त हैं और 'गर्म कोट' फिल्प में संगीत–निर्देशन भी कर चुके हैं।

सम्मान :–

गायन शैली की ख्याल गायकी की क्षेत्र में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है। खाँ साहब कभी–कभी तराना भी गाते थे। तराना की गायन–शैली के सम्बन्ध में उनका विश्वास था कि अपने मौलिक रूप में तराना अध्यात्मवाद से परिपूर्ण होता है और अपनी बन्दिश के माध्यम से गायक ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने का प्रयास करता है। उनका अन्तर्मुखी चिन्तन और तराने का अर्थ खाँ साहब के अनुसार नादिर दानी का अर्थ है तू सबसे अधिक जानता है, तनदरदानि का अर्थ है तन के अन्दर का जानने वाला, दरा का अर्थ है अन्दर आ, ननन्दरा का अर्थ है तन के अन्दर आ, तोम अर्थात् मैं तेरा हूँ। अला अलीहला अली, अललूम आदि शब्द खुदा के नाम हैं और ये सब तराने में ईश्वर उपासना के लिए कहे गए हैं। बिहार के गर्वनर जाकिर साहब के राजभवन में गाना हुआ और तराना के इस खोज पर बिहार संगीत नाट्य परिषद् का उन्हें फैलो (1988) बना दिया। वर्ष 1967 में अकादमी का राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कार मिला। वर्ष 1971 में उन्हें पद्मभूषण अलंकार और वर्ष 1971 में ही उन्हें सुर–सिंगार संसद में स्वर विलास प्रदान किया गया।

इसके अतिरिक्त फिल्म्स डिवीज़न ने उस्ताद अमीर खाँ पर वृत्तचित्र तैयार किया। खाँ साहब पर एक पुस्तक संगीत के देदीप्यमान सूर्य उस्ताद अमीर खाँ जीवन एवं रचनाओं का प्रकाशन कनिष्क प्रकाशन द्वारा हुआ है, जो काफली लोकप्रिय है।

मृत्यु :– 13 फरवरी 1974 की अर्द्धरात्रि को एक कार दुर्घटना में उस्ताद अमीर खाँ का निधन हुआ।

9.4. उस्ताद अलाउद्दीन खाँ :– उस्ताद अलाउद्दीन खाँ को 'बाबा अलाउद्दीन' के नाम से भी जाना जाता है। ये एक बंगाली सरोद वादक, बहु–वाद्ययन्त्र में निपुण और भारतीय शास्त्रीय संगीत के जाने–माने 20वीं सदी के संगीतकार तथा संगीत शिक्षक थे। संगीत शिक्षा तथा संगीत साधना ही उनके जीवन का उद्देश्य रहा।

.जन्म :– उस्ताद अलाउद्दीन खाँ का जन्म त्रिपुरा राज्य (अब बांग्लादेश में) शिवपुर ग्राम के मध्य वर्गीय कृषक परिवार में 1862 ई० में हुआ। ईश्वर भक्ति और संगीत साधना का वातावरण इन्हें अपने परिवार में बचपन से ही मिला।

संगीत शिक्षा :–

अलाउद्दीन खाँ जी के पिता सबदर हुसैन खाँ उर्फ़ साधू खाँ को संगीत से अत्याधिक लगाव था। आप बहुत अच्छा सितार बजाते थे, जिसकी शिक्षा आपको कासिम अली खाँ से प्राप्त हुई थी। उस्ताद अलाउद्दीन खाँ साहब को संगीत सीखने की प्रेरणा अपने पिता से मिली। आपका मन पढ़ाई–लिखाई में नहीं लगा और आपकी कलकत्ता जाकर संगीत सीखने की लालसा उत्पन्न हुई। 19 वर्ष की आयु में ही ये घर छोड़कर भाग गए और बंगाल के पारम्परिक 'जात्रा थिएटर' में काम करने लगे। यहाँ पर इन्हें समृद्ध बंगाली लोक–कला को जानने का अवसर मिला। कुछ समय बाद ये कलकत्ता चले गए, जहाँ पर इनकी मुलाकात उस समय के प्रसिद्ध गायक गोपाल कृष्ण भट्टाचार्य उर्फ़ 'नुलो गोपाल' से हुई। इन्होंने 7 वर्षों तक गुरु के संरक्षण में गीत–संगीत की शिक्षा पाई। इसके बाद 'बाबा' के गुरु का प्लेग की बीमारी के कारण निधन हो गया। इसके साथ ही आप कलकत्ते के नंदा बाबू जी से आपने तबला और पखाबज की शिक्षा प्राप्त करते रहे।

इसके बाद ये गुरु अमृतलाल दत्त ''हब्बो दत्त'' के शागिर्द बन गए जो महान् भारतीय दार्शनिक स्वामी विवेकानन्द के रिश्तेदार और 'कोलकाता स्टार थिएटर' के डायरेक्टर थे। इनके आपने वायलिन, क्लैरनेट, बांसुरी और सितार का ज्ञान प्राप्त किया। इस दौरान इन्होंने पाश्यात्य संगीत और वायलिन का अभ्यास 'लेले साहब' से किया, जो गोवा में उस समय बैंड मास्टर थे।

इसके बाद मुक्कागाध दरबार में उस्ताद अहमद अली खाँ का सरोद वादन सुना और आप उनके शिष्य बन गए। उनसे आपने सरोद शिक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् आप रामपुर (उत्तरप्रदेश) में आ गए। यहाँ आपने उस्ताद बजीर खाँ साहब से संगीत शिक्षा प्राप्त करना आरम्भ कर दिया। रामपुर में उस्ताद बजीर खाँ संगीतज्ञ थे। उनसे सीधा सम्बन्ध स्थापित करना बड़ा कठिन था, उन्होंने प्रारम्भ में ढाई साल तक इनको कुछ नहीं सिखाया। लेकिन बाद में इनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर उन्होंने कई वर्षों तक इन्हें संगीत शिक्षा दी, आपने बजीर खाँ साहब से रबाब, सरोद, सुर सिंगार बजाना सीखा तथा ध्रुपद–धमार की अनेक बंदिशें भी उनसे महारत हासिल करना था।

गुरु बजीर खाँ :– उस्तार मुहम्मद बजीर खाँ के शिष्यत्व के समय बाबा को उस्ताद ने वचन दिया था कि मैं तुम्हें (बाबा को) अपने परिवार के बाहर अपना प्रमुख तथा श्रेष्ठ शिष्य मानूँगा और सभी ध्रुपद और धमार गायन, बीन, रबाब और सुर श्रृंगार की तकनीक तथा विविध वादन–शैलियाँ सिखाऊँगा। उन्होंने एक बात स्पष्ट की कि तुम्हें (बाबा को) बीन बजाने की अनुमति कभी नहीं मिलेगी, क्योंकि परम्परागत रूप से यह बीन मेरे परिवार तक सीमित है।

बाद में बजीर खाँ ने बाबा को कहा कि तुम्हारे लिए उचित होगा कि वह सरोद पर बीन–वादन की तकनीक शैलियों का प्रयोग करें। उन्होंने रबाब और सुर–श्रृंगार जो अब अप्रचलित हो रहे हैं सिखाना स्वीकार किया।

बजीर खाँ बीननकार के माध्यम से अलाउद्दीन खाँ ने भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रतिष्ठित सेनिया घराने में प्रवेश पाने में सफलता प्राप्त की, जिसे 'तानसेन स्कूल ऑफ म्यूजिक' के नाम से भी जाना जाता है। यह विशेष घराना उत्तर भारत के सबसे प्रतिष्ठित संगीत शिक्षा के केन्द्रों में शामिल हैं।

संगीततिक यात्रा :— बाबा अलाउद्दीन खाँ वर्ष 1935 में उदयशंकर के साथ कार्यक्रम में भाग लेने के लिए यूरोप की यात्रा की और बाद में कुछ दिनों तक इन्होंने नृत्यकार उदयशंकर के संगीत प्रशिक्षण संस्थान 'उदय शंकर इंडियन कल्चर सेंटर' अल्मोरा में भी अपना योगदान दिया। अपने जीवनकाल में इन्होंने बहुत से संगीत के 'रागों' का निर्माण किया और आधुनिक 'मैहर घराना' की नींव रखी। इसी बीच वर्ष 1959—60 में 'आल इंडिया रेडियो' ने इनके संगीत के विभिन्न रागों की रिकार्डिंग की। इसके अतिरिक्त इन्होंने अन्य संगीत संस्थानों को भी आगे बढ़ाने में योगदान दिया। प्राचीन भारतीय शास्त्रीय संगीत और पाश्चात्य संगीत को वर्तमान के साथ संवारने में इनका योगदान अविस्मरणीय है।

पारिवारिक जीवन :— वर्ष 1888 में इनका विवाह मदनमंजरी देवी के साथ हुआ। इनको एक पुत्र अली अकबर खान तथा तीन बेटियाँ शारिजा, जहानजारा और अन्नपूर्णा (रोशनारा खान) पैदा हुई। शारिजा की अल्पायु में ही निधन हो गया। दूसरी बेटी जहनारा की शादी हो गयी, जहां पर उसकी सासु ने संगीत से द्वेषवश उसके तानपुरे को जला दिया। इस घटना से दुःखी होकर खान ने निश्चय किया कि वह अपने छोटी बेटी को संगीत की शिक्षा नहीं देंगे। एक दिन जब वे कहीं से घर वापस आये तो उन्होंने देखा कि अन्नपूर्णा अपने भाई अली अकबर खान को पढ़ा रही है, उसकी यह कुशलता देखकर पिता का मन बदल गया। बाद में अन्नपूर्णा ने शास्त्रीय संगीत, सितार और सुरबहार बजाना अपने पिता से सीखा। आगे चलकर इसकी शादी पंडित रविशंकर जी के साथ हुई।

बाबा के गुण :— बाबा के पास विभिन्न प्रसिद्ध घरानों की बहुमूल्य सामग्री एवं शैलियों का अभूतपूर्व खजाना था। असीम धैर्य, रियाज तथा पूर्ण निष्ठा एवं भक्ति से वे अपने समय के प्रतिभा सम्पन्न संगीतज्ञ बन गए। ध्रुपद आलापचारी की शुद्धता, धमार की चपलता अद्भुत लयकारी राग के वेदना भरे विलम्बित का भाव, द्रुत का वेग, ख्याल का अंग, ठुमरी अंग आदि आपकी विशेषताएं थी। बाबा ने ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा, ठुमरी आदि की शिक्षा पाई थी। उनकी अपनी विशिष्ट पद्धति थी, जिसे आज ''मैहर घराना'' कहा जाता है।

संगीत के क्षेत्र में इनकी उपलब्धियाँ :— सरोद विशेषज्ञ, अलाउद्दीन खाँ तत्कालीन मैहर एस्टेट (मध्य प्रान्त) के महाराजा बृजनाथ सिंह के दरबारी संगीतकार थे। हालांकि मैहर घराने की स्थापना 19वीं शताब्दी में हुई थी, लेकिन 'मैहर संगीत शैली' और 'मैहर घराने' एवं प्राचीन

भारतीय शास्त्रीय संगीत के पुनरोत्थान का श्रेय इन्हें ही दिया जाता है। इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवनकाल मैहर में गीत–संगीत के साथ व्यतीत किया। यहां पर इन्होंने वर्ष 1955 में 'मैहर कॉलेज ऑफ म्यूजिक' की स्थापना की।

कृतित्व :– अलाउद्दीन खाँ जी ने प्राचीन भारतीय जटिल भारतीय रागों को छोड़कर बहुत से नए अपने राग बनाए। उनके द्वारा बनाए गए विभिन्न राग हैं – अर्जन, भगवती, भीम, भुवनेश्वरी, दीपिका, दुर्गेश्वरी, गांधी, गांधी बिलावल, हेमंत, हेमंती, हेम–बेहाग, हेमंत भैरव, इम्नी मांझ, जौनपुरी तोड़ी केदार मांझ, कोमल भीमपलासी, मांझ खमाज, मेघबहार, राजेश्री, शोभावती, सुरसती, सुगंधा, प्रभाकली, मदनमंजरी, मधावगिरी, मधावक्षी, नट–खमाज, धनकोष आदि। इनमें से राग, 'मांझ खमाज' को सबसे अच्छा माना जाता है। अलाउद्दीन खान के रागों की कुछ सीडी भी बाजारों में जारी की गई है। आपने कई शिष्य तैयार करने के अलावा मैहर संगीत विद्यालय में शिक्षा एवं मैहर बैण्ड का गठन, 'बाबा' के उल्लेखनीय योगदान है।

शिष्य परम्परा :–

आपके पुत्र सुप्रसिद्ध सरोद वादक अली अकबर खाँ तथा सुपत्री अन्नपूर्णा देवी सुर बहार वादिका के अतिरिक्त विश्वख्याति प्राप्त सुप्रसिद्ध सितार वादक भारतरत्न पंडित रविशंकर आपके प्रिय शिष्यों में से एक थे, जिन्होंने आपकी पुत्री से विवाह किया था। इसके अलावा बाबा के शिष्यों में प्रमुख हैं : श्री पन्नालाल घोष (बांसुरी), श्री निखिल बैनर्जी (सितार), श्रीमती शरण रानी माथुर आशीष खाँ, श्री ज्योतिन भट्टाचार्य (सरोद), श्री बहादुर खाँ, श्री तिमिर बरन भट्टाचार्य (सरोद), इन्द्रनील भट्टाचार्य, राबिन घोष (वायलिन)। शिक्षक के रूप में बाबा की कुशलता का इसी से पता चलता है कि उन्होंने पंडित रविशंकर व निखिल बैनर्जी दोनों को विभिन्न शैली के सितार वादक के रूप में तैयार किया। इन दोनों की अलग–अलग विशेषताएँ हैं।

सम्मान :– भारत के कई संस्थानों ने इन्हें विभिन्न उपाधियों से सम्मानित किया। आचार्य अलाउद्दीन खाँ को कलकत्ता में 'भारत का गौरव' तानसेन संगीत की ओर से 'आफताबे हिन्द', वर्ष 1949 में भातखण्डे संगीत विद्यालय की ओर से संगीताचार्य, वर्ष 1964 में शान्तिनिकेतन की ओर से 'दशिकोत्तम', राजा मैहर की ओर से 'संगीत नायक,' अलंकरणों से

सम्मानित नाटक अकादमी ने भारतीय संगीत को आजीवन विशेष योगदान के लिए अपने सर्वोच्च सम्मान स्वरूप 'संगीत नाटक अकादमी फ़ेलोशिप' प्रदान किया। वर्ष 1958 में इन्हें भारत सरकार ने अपने तीसरे सबसे बड़े नागरिक सम्मान 'पद्म भूषण' से सम्मानित किया।

वर्ष 1971 में भारत सरकार ने इन्हें अपने दूसरे बड़े नागरिक सम्मान 'पद्म विभूषण' से सम्मानित किया।

निधन :– उस्ताद अलाउद्दीन खाँ जी का निधन वर्तमान मध्यप्रदेश के मैहर में 6 सितम्बर 1972 को हो गया।

9.5. सारांश :– उस्ताद अमीर खाँ तथा उस्ताद अलाउद्दीन खाँ जी ने भारतीय संगीत में अपना अमूल्य योगदान दिया। उस्ताद अमीर खाँ न केवल अपने युग के अनेक गायकों–वादकों के आदर्श और प्रेरणा स्रोत रहे, बल्कि 21वीं सदी के अनेक कलाकार उन्हीं के पदचिन्हों पर चलकर संगीत के शिखर को स्पर्श करने का प्रयास कर रहे हैं।

उस्ताद अल्लाउद्दीन खाँ वाद्यवृन्द एवं अन्य अनेक वाद्यों के प्रवीण कलाकार एवं गुरु उस्ताद अलाउद्दीन खाँ भारत के विख्यात संगीतज्ञ हुए। उन्होंने सरोद वादन को नवीन मोड़ देकर उसमें नवीन सजगता पैदा की। भारतीय संगीत में इन दोनों महान् विभूतियों का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा।

9.6 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1. उस्ताद आमिर खाँ जी कहाँ के रहने वाले थे।

   1 कलकता 2 बनारस 3 इन्दौर 4 पंजाब ऊ 3

2. इनदौर घराने के प्रसिद्ध गायक उस्ताद आमिर खाँ जी को कौन से सम्मान मिला है।

   1 भारत रत्न 2 पद्म भूषण 3 संगीत अलंकार 4 संगीत नाट्क अकादमी ऊ 2

3. उस्ताद अलाउददीन खाँ जी का जन्म कब हुआ।

   1 1862 2 1867 3 1888 4 1876 ऊ 1

4. उस्ताद अलाउददीन खाँ जी के शिष्य हैं

1 पंडित रविशंकर 2 हरि प्रसाद चौरसिया 3 राशिद खा 4 यशराज ऊ 1

5. उस्ताद अलाउददीन खाँ जी को कौन से सम्मान मिला है।

1 भारत रत्न 2 पद्म भूषण 3 संगीतअलंकार 4 संगीत नाट्क अकादमी ऊ 2

9.7. परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

1. उस्ताद आमिर खाँ जी का जीवन परिचय को लिखें।

2. इनदौर घराने के प्रसिद्ध गायक उनके सांगीतिक योगदान की चर्चा करें।

3. उस्ताद अलाउददीन खाँ जी का जीवन परिचय लिखें।

4. उस्ताद अलाउददीन खाँ जी के सांगीतिक योगदान को लिखें।

5. उस्ताद अलाउददीन खाँ जी का जीवन परिचय एवं उनके सांगीतिक योगदान पर प्रकाश ढालें।

6. उस्ताद आमिर खाँ जी के सांगीतिक योगदान को लिखें।

9.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. हमारे संगीत रत्न , लक्ष्ती जारायण गर्ग

2 संगीत विशारद, प्रभुलाल वसंत

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 10**

TITAL:- Knowledge of Books, Raag Tarnagini and Sangeet Parijat

10.1 **प्रस्तावना**

10.2 **उद्धेश्य**

10.3 **राग तरंगिणी**

10.4 **संगीत पारिजात**

10.5 **सारांश**

10-6 **लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न**

10.7 **परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न**

10.8 **सन्दर्भ ग्रन्थ**

10.1. प्रस्तावना

राग तरंगिणी की रचना पंडित लोचन द्धारा की गई है। ग्रन्थकार ने सभी रागों को 12 थाटों के अन्तरर्गत रखा है।

संगीत पारिजात भारजीय संगीत का बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसकी रचना पंडित अहोबल जी ने 17 शतावदी की थी।संगीत पारिजरत और राग तरंगिणी दोनों ग्रन्थों में शुद्ध सप्तक एक समान है।

10.2. उद्धेश्य

इन दोनों ग्रन्थों के अध्ययन से संगीत के विधार्थी को संगीत की स्थिति का ज्ञान होता है कि कौन से काल में कौन कौन सी गायन शैनिया थी तथा उन विधाओं को कैसे

गाया जाता था इन सभी के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है। जिससे प्राचीन गायन तथा वर्तमान गायन की तुलना कर सकेगा। इन्ही ग्रन्थों से प्राचीन काल के संगीत का ज्ञान होता हैं।

10.3. राग तरंगिणी

लोचन कृत 'राग तरंगिणी' नामक सांगीतिक ग्रन्थ भारतीय संगीत के ग्रन्थों में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

. रचना काल :–

कुछ विद्वान् 'राग तरंगिणी' को 12वीं और कुछ 14वीं ई० का ग्रन्थ मानते हैं। साधारणतः पंडित लोचन का समय चौदहवीं शताब्दी का अन्तिम तथा पंद्रहवीं शताब्दी का प्रारम्भिक काल था। अतः इस ग्रन्थ की रचना, 14वीं शताब्दी के अंतिम तथा 15वीं शताब्दी के आरम्भिक वर्षों में हुई कही जाती है। यह ऐसा युग था जब संगीत–पद्धति में द्रुत गति से परिवर्तन हो रहे थे। अतः पंडित लोचन को प्राचीन तथा नवीन पद्धति की विभिन्नताओं को समझने का सुअवसर प्राप्त हुआ।

सामग्री :– लोचन ने भारतीय संगीत एवं यवन संगीत के गुणों का संग्रह कर इस ग्रन्थ की रचना की। इसमें सर्वप्रथम 'राग रागिनी पद्धति' को छोड़कर थाट पद्धति अपनाई गई है। इस ग्रन्थ में जहाँ लोचन ने नाद, श्रुति, स्वर आदि के प्राचीन सिद्धान्त दिए हैं, वहीं दूसरी तरफ फारसी के 24 हंगाम तथा 12 मुकाम भी माने हैं। लोचन ने अपने इस ग्रन्थ में दो प्रसिद्ध पूर्ववर्ती ग्रन्थकारों 'जयदेव' व 'विद्यापति' का उल्लेख किया है जिनके विषय में यह धारणा

श्रुति :– लोचन पंडित ने अपने पूर्व ग्रन्थकारों के समान वह भी एक सप्तक में 22 श्रुतियाँ मानी हैं। श्रुति विभाजन भी सात स्वरों के मध्य में 'चतुश्चतुश च तुश चैव षड्ज मध्यम पंचम' ही मानते हैं अर्थात् श्रुतियों पर स्वरों का क्रमानुसार 4–3–2–4–4–3–2 के हिसाब से ही विभाजन मानते हैं। स्वर भी अपनी अन्तिम श्रुति पर प्रकट होता है।

स्वर :– लोचन ने सात शुद्ध स्वरों के साथ 9 विकृत अर्थात् कुल 16 स्वर माने हैं। लोचन के विकृत स्वर इस प्रकार है –

छठवीं श्रुति पर	कोमल रे

दसवीं श्रुति पर	तीग्र गंधार
ग्यारहवीं श्रुति पर	तीव्रतर गंधार
बारहवीं श्रुति पर	तीव्रतम गंधार
तेरवहीं श्रुति पर	अति तीव्रतम गंधार
पंद्रहवीं श्रुति पर	तीव्रतम म
सोलहवीं श्रुति पर	अति तीव्रतम म
उन्नीसवीं श्रुति पर	कोमल ध
इक्कीसवीं श्रुति पर	तीव्र ध
बाईसवीं श्रुति पर	तीव्रतर ध
पहली श्रुति पर	तीव्र नी
दूसरी श्रुति पर	तीव्रतर नी
तीसरी श्रुति पर	तीव्रतम नी

सातों शुद्ध स्वर क्रमशः 4,7,9,13,19,20,22 हैं। कुछ स्वरों को उन्होंने 2–2 नामों से सम्बोधित किया है। तेरहवीं श्रुति पर शुद्ध म और अति तीव्रतम गन्धार तथा बाईसवीं पर शुद्ध नी और तीव्रतम धैवत है।

. थाट :– कवि लोचन ने इस ग्रन्थ में थाट के स्थान पर 'मेल' का वर्णन किया है। राग तरंगिणी में कुल 12 मेलों की रचना की गयी है। मेलों से अपने 75 रागों की उत्पत्ति मानी है। रागों को वर्गीकृत करने के लिए लोचन ने बारह संस्थान पद्धति को अपनाया है।

मेलों या थाटों की संख्या के विषय में कुछ आचार्यों के मतभेद पाया जाता रहा है। टंयकटमखी ने 72 तथा हिन्दुस्तानी पद्धति में 32 थाटों को स्वीकार किया गया, परन्तु लोचन ने इस ग्रन्थ में 12 मेलों का उल्लेख किया जिनके नाम इस प्रकार हैं :–

(1) दीपक	(2) मुखारी	(3) धनाश्री	(4) पूर्वी	(5) मेघ	(6) सारंग
(7) यमन	(8) केदार	(9) कण	(10) गौरी	(11) तोड़ी	(12) भैरवी।

'राग तरंगिणी' में परिकल्पित शुद्ध मेल आधुनिक काफी थाट के समान था। उनके शुद्ध 'ग' और शुद्ध 'नी' हिन्दुस्तानी पद्धति के कोमल 'ग' और कोमल 'नि' हैं।

गान :– सर्वप्रथम लोचन ने इस ग्रन्थ में गायन के दो प्रकार बताये हैं :–

(1) निबद्ध गान (2) अनिबद्ध गान

. रागों का समय–सिद्धान्त :–

पंडित लोचन ने रागों का गायन समय भी 'राग तरंगिणी' में वर्णित किया है। यह गायन समय हिन्दुस्तानी रागों पर भी अत्याधिक प्रकाश डालता है :–

राग	गायन समय
भैरव और रामकली	प्रातः काल
गौरी	संध्याकाल
विला वली	दिन के प्रथम प्रहर में
कल्याण	रात्रि के प्रथम प्रहर में
तोड़ी और सुहा	पूर्वाह्न
सारंग	मध्याह्न
कानड़ा	मध्य रात्रि में
अड़ाना	रात्रि के तृतीय प्रहर में
मेघ	वर्षा ऋतु

राग रागिनी पद्धति :–

राग तरंगिणी में 'राग रागिनी पद्धति' का भी अनुसरण किया गया है। इसमें कुल 6 राग तथा प्रत्येक राग की 5–5 रागिनियाँ मानी जाती हैं। छः रागों के नाम इस प्रकार हैं :– भैरव, कौशिक, हिण्डोल, दीपक, श्री और मेघ।

. रागों की जातियाँ :– ग्रन्थ के अंतिम भाग में राग की जातियों पर भी विचार किया गया है। लोचन के मतानुसार सम्पूर्ण जाति के जितने राग हैं वे ब्राह्मण जाति के राग माने जाते हैं। इस प्रकार षाडव जाति के राग क्षत्रिय और औड़व जाति के राग वैश्य जाति के माने जाते हैं। इसके अतिरिक्त षाड़व–सम्पूर्ण आदि 6 उपजातियों के अन्तर्गत जितने राग आते हैं उनकी गणना शुद्र जाति में की जाती है।

राग के रस :– पंडित लोचन ने ग्रन्थ के अंत में राग के रसों पर भी प्रकाश डाला है। उनके मतानुसार प्रत्येक राग से किसी–न–किसी रस की उत्पत्ति अवश्य होती है। जिस राग से किसी रस की उत्पत्ति न हो सके तो वह राग, राग की कोटि में नहीं आ सकता।

10.4. संगीत पारिजात :– पंडित अहोबल का 'संगीत पारिजात' अत्यन्त प्रसिद्ध ग्रंथ माना जाता है। अहोबल संस्कृत तथा संगीत–विद्या के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उन्होंने 'संगीत पारिजात' ग्रंथ की रचना भी संस्कृत भाषा में की। इसका अनुवाद हिन्दी भाषा में किया गया है। पं० अहोबल ने इस ग्रंथ में संगीत का शास्त्रीय परिचय विस्तारपूर्वक दिया है।

रचनाकाल :–

इस ग्रंथ का रचनाकाल 1650 ई० है।

सामग्री :–

यह ग्रंथ कई दृष्टियों से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। अहोबल ही सर्वप्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने अपने ग्रंथ में वीणा पर स्वर–स्थान निर्धारण की एक नवीन पद्धति अपनाई। वीणा पर बजने वाले तार पर भिन्न–भिन्न नाप से उन्होंने अपेये शुद्ध तथा विकृत स्वरों की स्थापना की। अहोबल का शुद्ध थाट भी आजकल के प्रचलित काफी थाट के समान है। इस पद्धति द्वारा एक साधारण व्यक्ति भी स्वर की स्थापना उचित ढंग से कर सकता है।

इस ग्रंथ में मंगलाचरण के पाँच अध्याय है जिन्हें प्रकरण कहा गया है। इनका विषय–क्रम निम्नलिखित है :–

1. स्वर प्रकरण 2. मूर्च्छना प्रकरण 3. स्वर विस्तार प्रकरण

4. गमक प्रकरण 5. समय प्रकरण

'मंगलाचरणम्' से ही यह ग्रंथ प्रारम्भ होता है। इसके अनुसार यदि विष्णु भगवान् के पवित्र नाम सुन्दर स्वरों में गाये जायें तो यह सामवेद की ऋचाओं के समान फलदायक होते हैं। लेखक ने 'नाद' 'ब्रह्म' था 'स्वर' से ईश्वर की समानता का निरूपण किया है। राक्षसों की संहारक भगवती, दुर्गा संगीत में ही सदैव निमग्न नहती हैं, ग्रंथकार ने भगवान् विष्णु के उस कथन को दोहराया है जिसमें उन्होंने नारद से कहा है कि 'न तो मैं वैकुण्ठ में निवास करता हूँ और न योगियों के हृदय में, बल्कि मेरे भक्तजन यहाँ वास करते हैं, मैं भी वहीं निवास करता हूँ।'

जो व्यक्ति वीणा–वादन के महत्त्व को समझता है, श्रुति और स्वरों की जाति–भेद का ज्ञाता है तथा लय–ताल का जानकार पुरुष बिना योग–साधना के मोक्ष प्राप्त करता है। लेखक ने संगीत के दो प्रकार वर्णित किये हैं :–

1. मार्गी 2. देशी

ग्रंथकार ने आगे वर्णित किया है कि शरीर में कुछ विशिष्ट नाड़ियाँ होती हैं और उनके चक्र होते हैं। संगीत साधना से यह चक्र जागृत हो जाते हैं। इस प्रकार इससे मोक्ष प्राप्त होता है। नाड़ियों से नाद की उत्पत्ति, स्वरों का स्पष्टीकरण आदि होता है।

इस ग्रंथ में नाद की व्याख्या की गयी है। नाद के आहत और अनाहृत दो भेद होते हैं। नाद से श्रुतियों की उत्पत्ति किस प्रकार हुई, इसका विशद विवेचन 'संगीत पारिजात' मिलता है।

रागों में प्रयुक्त वादी, सम्वादी, विवादी, अनुवादी इनके गोत्र हैं, उनके पृथक्–पृथक् देवता हैं। छन्द, नवरस, तीन ग्राम उसकी 21 मूर्च्छनायें, सरल और कूटतान इत्यादि के वर्णन से उनका मंगलाचरणम् अध्याय समाप्त होता है।

संगीत पारिजात के पाँच अध्यायों या प्रकरण का विवरण इस प्रकार है :—

स्वर प्रकरण :— अहोबल ने उल्लेख किया है कि श्रुति और स्वर में उतना ही भेद है जितना की सर्प और उसकी कुण्डली में। कानों द्वारा गृहीत ध्वनि श्रुति कहलाती है। पं० अहोबल ने 22 श्रुतियों के नाम परम्परागत वर्णित किये हैं। इन श्रुतियों की 5 जातियाँ भी बताई हैं जो इस प्रकार हैं :—

1. दीप्ता
2. आयता
3. करुणा
4. मृदु
5. मध्या

जिस प्रकार गन्ने में रस परिपूर्ण होता है उसी प्रकार श्रुति के अन्दर जाति व्याप्त होती है : शुद्ध स्वर सात माते हैं। उन्होंने स्वर को इस प्रकार परिभाषित किया है कि ''जो स्वतः सुनने वाले के चित्त को आकर्षित करे वह स्वर है।''

पं० अहोबल ने 22 विकृत स्वर माने हैं। कुछ स्वरों के नाम एक से अधिक कथित हैं। अहोबल ने 22 श्रुतियों पर 4—3—2—4—4—3—2 के प्राचीन सिद्धान्तानुसार 7 स्वरों की स्थापना को ही श्रेष्ठ माना है तथा प्रत्येक स्वर को उसकी अन्तिम श्रुति पर स्थिर माना है। लेखक का मत है कि जब कोई स्वर अपने मूल स्थान से एक श्रुति ऊँचा हो तो तीव्र, दो श्रुति ऊँचा हो तो तीव्रतर तथा तीन व चार श्रुति ऊँचा हो तो क्रमशः तीव्रतम और अति तीव्रतम कहा जाएगा। स्वरों को दो—दो नाम प्रदान किए गए हैं। अहोबल के स्वर और उनके स्थान इस प्रकार हैं :—

श्रुति का नाम	**शुद्ध स्वर**	**कोमल विकृत स्वर**	**तीव्र विकृत स्वर**
तीव्रा			तीव्र नि
कुमुदन्ती			तीव्रतर नि
मंदा			तीव्रतम नि
छन्दोवती	षड्ज सा		

दयावती		पूर्व ऋषभ	
रंजनी		कोमल ऋषभ	
रतिका	ऋषभ रे	पूर्व गन्धार	
रौद्री		कोमल गन्धार	तीव्र रे
क्रोधा	गन्धार		तीव्रतर रे
वज्रिका			तीव्र ग
प्रसारिणी			तीव्रतर ग
प्रीति			तीव्रतम ग
मार्जनी	मध्यम		अति तीव्रतम म
क्षिति			तीव्र म
रक्ता			तीव्रतर म
संदीपनी			तीव्रतम म
अलापनी	पंचम		
मदन्ती		पूर्व धैवत	
रोहणी		कोमल धैवत	
रम्भा	धैवत	पूर्व निषाद	
उग्रा		कोमल निषाद	तीव्र धैवत
क्षोभिणी	निषाद		तीव्रतर धैवत

इस प्रकार इन विकृत स्वरों में कुछ ही दो स्वर एक ही स्थान पर हैं। वादी और सम्वादी के मध्य 8 अथवा 12 श्रुतियों का अन्तर होता है। वादी को राजा, सम्वादी को मंत्री, अनुवादी को सेवक और विवादी को शत्रु के समान माना है। सा–म–प को ब्राह्मण, रे–ध को क्षत्रिय, ग–नि को वैश्य और विकृत स्वरों को शुद्र कहा है। इन स्वरों के रंग भी लेखक ने वर्णित किये हैं। जैसे –

स – गुलाबी

रे – हरा

ग – पीला

म – सफेद

प – श्याम

ध – पीला

नी – बहुरंगी

इसके बाद लेखक ने 7 स्वरों के पृथक्–पृथक् देवता वर्णित किये हैं। षड्ज का अग्नि देवता, ऋषभ का ब्रह्म, गन्धार की देवी सरस्वती आदि।

सप्त स्वरों के रस और छन्द का भी उल्लेख किया है – जैसे :–

षड्ज–गन्धार – हास्य रस

ऋषभ मध्यम – श्रृंगार रस

प – भयानक रस

धैवत – बीभत्स रस

निषाद – करुण रस

विकृत स्वरों के रस एवं शुद्ध तथा विकृत स्वरों की आंदोलन–संख्यायें भी वर्णित की हैं :–

षड्ज	: 240
कोमल ऋषभ	: 254 2/17
ऋषभ	: 270
तीव्र गन्धार	: 301 17/43
गन्धार	: 288
मध्यम	: 320
तीव्र मध्यम	: 337 1/4
पंचम	: 360
कोमल धैवत	: 381 3/7
धैवत	: 405
निषाद	: 432
तीव्र निषाद	: 301 17/43 x 3/2

अहोबल ने स्वग्रंथ में 122 रागों का वर्णन किया है।

ग्राम–मूर्च्छना प्रकरण –

विशिष्ट स्वरों के समूह ग्राम कहलाते हैं। ग्राम तीन माने गये हैं। षड्ज, मध्यम और गन्धार षड्ज ग्राम सबसे उत्तम हैं।

उन्होने मूर्च्छना को इस प्रकार पारिभाषित किया है कि जब स्वरों का आरोहण और अवरोहण एक निर्धारित क्रम से और एक निश्चित स्थान से होता है उसे मूर्च्छना कहते हैं। उनके अलग–अलग नाम हैं। उत्तरामन्द्रा, रंजनी, उत्तरायता आदि।

ग्रन्थकार ने शुद्ध स्वरों के साथ–साथ विकृत स्वरों की भी मूर्च्छनायें वर्णित की हैं। उन्होंने सम्पूर्ण षाड़व और औड़व तीनों जाति की मूर्च्छना की उत्पत्ति का भी उल्लेख किया है।

स्वर–प्रस्तार–प्रकरण :–

खण्डमेरू ढंग की स्वर रचना का वर्णन किया है। चार प्रकार के वर्ण स्थायी, आरोही, अवरोही एवं संचारी तथा उन्हीं वर्णों पर आधारित 63 प्रकार के अलंकारों का उल्लेख किया है। 7 अलंकार स्थायी वर्ण के, 12 अलंकार आरोही वर्ण के, 12 अवरोही वर्ण के, 25 संचारी वर्ण के और अन्य 12 अलंकार इन वर्णों से वर्णित किया है।

कुछ अलंकारों के साथ–साथ तालों के नामों का भी उल्लेख किया है। शुद्ध जातियाँ 4 मानी हैं, किन्तु उनका उल्लेख मात्र किया है।

गमक प्रकरण :– कम्पित, स्फुरित, प्रत्याह्त, तीरिम और हुम्फित इत्यादि गमकों की व्याख्या की है। इसके बाद उन्होंने संगीत के इतिहास में सर्वप्रथम वीणा के तार पर स्वर की स्थापना की है। यह वर्णन पूर्णतः स्पष्ट नहीं है। अतः इस संदर्भ में अहोबल का नामोल्लेख नहीं होता जबकि श्रीनिवास का नाम उभर कर सामने आता है। ''संगीत पारिजात'' के दस वर्षों के उपरान्त 1660 में श्रीनिवास ने पूर्णतः अहोबल के समान 12 स्वरों की स्थापना का वर्णन किया है। उनका भी श्रेय अहोबल को उपलब्ध हैं।

मेलों के विषय में उनका कथन है कि शुद्ध और विकृत दोनों प्रकार के स्वरों का मेल होता है। सभी मेलों की संख्या 21, 340 होगी।

उन्होंने पाँच गीतियाँ स्वीकार की हैं। शुद्ध, भिन्ना, गौड़ी, वेसरा, साधारणी। इन गीतियों के लक्षण भी वर्णित किये हैं।

समय प्रकरण :– रागों के गायन समय पर भी उन्होंने प्रकाश डाला है। कुछ रागों को सर्वकालिक मान्यता भी दी है। जैसे मेघमल्हार। उसका आरोह–अवरोह भी वर्णित किया है।

सा रे म प ध सा।

सा ध प म रे सा

वर्षा ऋतु में किसी भी समय इस गाया बजाया जा सकता है। उन्होंने सभी रागों के गायन समय को भी प्रतिपादित किया है।

''संगीत पारिजात'' में कुल 500 श्लोक उपलब्ध हैं। ग्रंथ के अंत में किन–किन रसों की उत्पत्ति होती है, इस पर बहुत ही सुगम शैली में प्रकाश डाला गया है।

10.5. सारांशः— लोचन पंडित मैथिल ब्राह्मण थे। उन्होंने संस्कृत और संगीत का विस्तृत अध्ययन किया था तथा 'रागसर्वसंग्रह' तथा 'राग तरंगिणी' नामक दो संगीत ग्रन्थों की रचना की। इन रचनाओं के फलस्वरूप इनको संगीत–संसार में अपूर्व यश एवं सम्मान की प्राप्ति हुई। संस्कृत के उच्चकोटि के विद्वान् होने के कारण प्राचीन तथा अर्वाचीन संगीत का अध्ययन करने में इनको बहुत सुविधा मिली। संगीत शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् होने के पश्चात् इन्होंने क्रियात्मक संगीत का भी समुचित अभ्यास किया। अतः उनके द्वारा लिखित 'राग तरंगिणी' में उन्होंने संगीत से जुड़ी बहुत सी महत्त्वपूर्ण बातों का वर्णन किया गया है जिसके कारण यह ग्रन्थ संगीत–ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

संगीत पारिजात भी संगीत शास्त्र की दृष्टि से प्रमाणित ग्रंथ है। संगीत कला में निपुणता प्राप्त पण्डित अहोबल उत्तर की ओर आए और यहाँ रहकर लोचन के ग्रामों का अध्ययन करने के पश्चात् संगीत पारिजात की रचना की। इसका फारसी अनुवाद पण्डित दीनानाथ द्वारा किया गया। इस ग्रंथ में अनेक ऐसे रागों का वर्णन है, जो उत्तरी भारत में तो प्रचार में नहीं हैं, किन्तु दक्षिण भारत में विशेष रूप से प्रचलित हैं। वैसे जिस संगीत पद्धति की विवेचना इसमें की गई है वह ठीक उत्तर संगीत की पद्धति ही है। इस ग्रंथ में लेखक ने नाद, श्रुति और स्वर से सम्बन्धित प्राचीन सिद्धान्तों को भी स्वीकार किया है।

इस प्रकार पण्डित अहोबल का ''संगीत पारिजात'' संगीत अध्ययन तथा अध्यापन में अत्यन्त उपयोगी ग्रंथ माना जाता है।

10.6 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

1. संगीत पारिजात का रचना काल क्या है।

   1 1665   2 1717   3 1745   4 1800   ऊ 1

2. राग तरगिणी ग्रन्थ की रचना किसने की है।

1 लोचन 2 अहोवल 3 शारंगदेव 4 रामामात्य ऊ 1

3. पंडित अहोवल के द्वारा रचित ग्रन्थ कौन सा है।

1 संगीत दर्पण 2 संगीत पारिजात 3 संगीत रतनाकर 4 नाट्य शास्त्र ऊ 2

4. राग तरगिणी का रचना काल कौन सी शतावदी का है।

1 14 वी 2 15 वी 3 16 वी 4 17 वी ऊ 1

5. संगीत पारिजात मे कितने रागों के विषय में कया वताया बया है

1 111 2 122 3 132 4 164 ऊ 2

10.7 परिक्षा से सम्बधित प्रश्न

1. संगीत पारिजात के विषय मे पिस्तार से लिखें।
2. राग तरगिणी ग्रन्थ के विषय मे लिखें।
3. पंडित अहोवल के द्वारा रचित ग्रन्थ की चर्चा करें।
4. राग तरगिणी में संगीत के विषय में कया कया बताया गया है।
5. संगीत पारिजात मे संगीत के विषय में कया वताया बया है उसकी चर्चा करे।

10.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. भारतीय संगीत का इतिहास, जयदेव

2. संगीत पारिजात, पंडित अहोवल

3. राग तरंगिनी, पंडित लोचन

4. संगीत रत्नावली, अशोक कुमार यमन

B.A. Vth. Semester **Course No: MU-501 Indian Music**

Unit - II **Lesson - 11**

11. स्वर सम्वाद

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्धेश्य

11.3 स्वर संवाद

11.4 षड्ज मध्यम तथा षड्ज पंचम भाव

11.5 सारांश

11.6 लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न

11.7 परीक्षा से सम्बंधित प्रश्न

11.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.1. प्रस्तावना

संगीत में दो स्वरों को एक साथ बजाने को स्वर सम्वाद कहते हैं। पाश्चात्य संगीत में इसे consonance कहा जाता है। भारतीय संगीत में स्वर सम्वाद दो स्वरों के सहयोग से उत्पन्न होता है जिसमें षड्ज मध्यम स्वर तथा षड्ज पंचम स्वर का भाव होता है। षड्ज पंचम भाव भारतीय संगीत का मुख्य भाव है।

11.2. उद्धेश्य

इस अध्याय का अध्ययन करने से विधार्थी को संगीत के स्वरों का ज्ञान, स्वरों की ध्वनि कैसी होती है जब दो स्वरों को एक साथ बजाया जाता है इसके बारे में जानकारी प्राप्त होती है। दो स्वरों के वादन से कैसी ध्वनि उत्पन्न होती है इन सभी चीजों का ज्ञान होता है।

11.3. स्वर संवाद :—

सम्पूर्ण संगीत जगत् में स्वर संवाद का विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान है। संवाद भारतीय संवाद का आधार है। नाद संसार में विचरते हुए स्वर जब परस्पर मिलते हैं तो रंजकता, मित्रता एवं विचित्रता का प्रादुर्भाव होता है। इसे संगीत की भाषा में 'स्वर संवाद' या 'Consonance' कहते हैं। संगीत ही नहीं अपितु अन्य जैसे एक परिवार के सभी सदस्यों में परस्पर प्रेम, मित्रता और एक—दूसरे का दुःख और सुख में सहायता करने का भाव होना आवश्यक है, उसी प्रकार एक सप्तक रूपी परिवार की सभी श्रुतियाँ परस्पर 'संवाद' करती हैं। इसी से मधुरता, विचित्रता, भावुकता एवं रंजकता का प्रादुर्भाव होता है। इसके अतिरिक्त जिन दो स्वरों को एक साथ गाने या बजाने से संगति का आभास हो अर्थात् माधुर्य उत्पन्न हो उसे 'स्वर संवाद' कहते हैं। जैसे स—प, स—म, स—ग आदि। संवाद का अर्थ है — संगति, मित्रता का भाव आदि। पाश्चात्य संगीतज्ञ इस संवाद को 'हार्मनी' (Harmony) कहते हैं। भारतीय और पाश्चात्य स्वर संवाद के सिद्धान्तों में अन्तर है। किन्तु दोनों सिद्धान्त एक ही लक्ष्य पर पहुँचते हैं। पाश्चात्य संगीत में रागों और तालों की संख्या सीमित है। पाश्चात्य संगीत में रागों की संख्या सीमित होने से उनका स्वर—संवाद भी सीमित है। किन्तु भारतीय संगीत पद्धति में रागों की संख्या अधिक होने से स्वर—संवाद भी अधिकाधिक स्वरों के साथ होना पाया जाता है।

11.4. षड्ज मध्यम तथा षड्ज पंचम भाव :—

भारतीय संगीत में सबसे प्रमुख षड्ज पंचम भाव तथा उसके बाद षड्ज मध्यम भाव को माना जाता है। इसके अतिरिक्त भी संवाद माने जाते हैं। परन्तु इन दोनों स—प, तथा स—म को सर्वाधिक श्रेणी का महत्त्व प्राप्त है।

भारतीय स्वर संवाद सिद्धान्त के अनुसार षड्ज—पंचम भाव और षड्ज मध्यम भाव के आधार पर स्वरों में संवाद होता है। षड्ज पंचम भाव का प्रयोग मध्यम—ग्राम में और षड्ज—मध्यम भाव का प्रयोग मध्यम—ग्राम में किया जाता है। षड्ज—पंचम भाव में 13 श्रुतियों के अन्तर पर तथा षड्ज—मध्यम भाव में 9 श्रुतियों के अन्तर पर स्वर—संवाद होता है। षड्ज पंचम भाव की स्वर जोड़ियाँ हैं — सा म, रे ध, ग नी, म सां। और षड्ज—मध्यम भाव की स्वर जोड़ियाँ हैं — सा म, रे प, ग ध, म नी, प सां। उपर्युक्त दोनों भावों की स्वर जोड़ियों में

क्रमशः 13 और 9 श्रुतियों के अन्तर पर परस्पर 'स्वर संवाद' होता है। पाश्चात्य संगीत में इन संवादों को 'Chord' कहते हैं। भारतीय अधिकांश रागों में षड्ज पंचम भाव तथा षड्ज मध्यम भाव की स्वर जोड़ियाँ वादी–सम्वादी के रूप में ग्रहण की जाती हैं। अतः स–प तथा सं– म के 'स्वर संवाद' को ही भारतीय संगीत में प्रमुख मानयता प्राप्त है।

11.5. सारांशः– संवाद का अर्थ होता है बोलना या समझना। स्वर की मधुरता ही संगीत में बात करने का एक मात्र सादन है।

षड्ज पंचम भाव संगीत में सबसे पहला भाव है। हम यह भी कह सकते हैं कि राग में मधुरता उत्पन्न करने का साधन स्वर सम्वाद ही है। दो स्वरों के सहयोग से ही स्वर सम्वाद उत्पन्न होता है और जो राग की मधुरता को बढाता हैं

11-6 **लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न**

1. स्वर सम्वाद में कितनें स्वर होते हे।

   1 1 2 2 3 3 4 4 ऊ 2

2. षड्ज पंचम भाव में सा के साथ कौन सा स्वर होता है

   1 रे 2 ग 3 म 4 प ऊ 4

3. षड्ज मध्यम भाव में सा के साथ कौन सा स्वर होता है

   1 रे 2 ग 3 म 4 प ऊ 3

4. षड्ज पंचम में कितनी श्रुतियों का अन्तर होता है।

   1 8 2 9 3 10 4 11 ऊ 2

5. षड्ज पंचम में कितनी श्रुतियों का अन्तर होता है

   1 8 2 13 3 10 4 11 ऊ 2

11.7. परीक्षा से सम्बधित प्रश्न

1. स्वर सम्वाद के विषय मे विस्तार से लिखें|.

2. स्वर सम्वाद कया है और इसका संगीत में कया महत्व है|.

3. स्वर सम्वाद कया है . षड्ज पंचम भाव तथा षड्ज मध्यम भाव के बारे में लिखे|

4. भारतीय शास्त्रीय संगीत में स्वर सम्वाद कया है|

11.8. सन्दर्भ ग्रन्थ

1. संगीत शास्त्र दर्पण, हरीशचन्द्र श्रीवास्तव, भाग 1

2. संगीत रत्नावली, अशोक कुमार यमन